कुरुक्षेत्र

मई : 1979

मूल्य : 50 पैसे

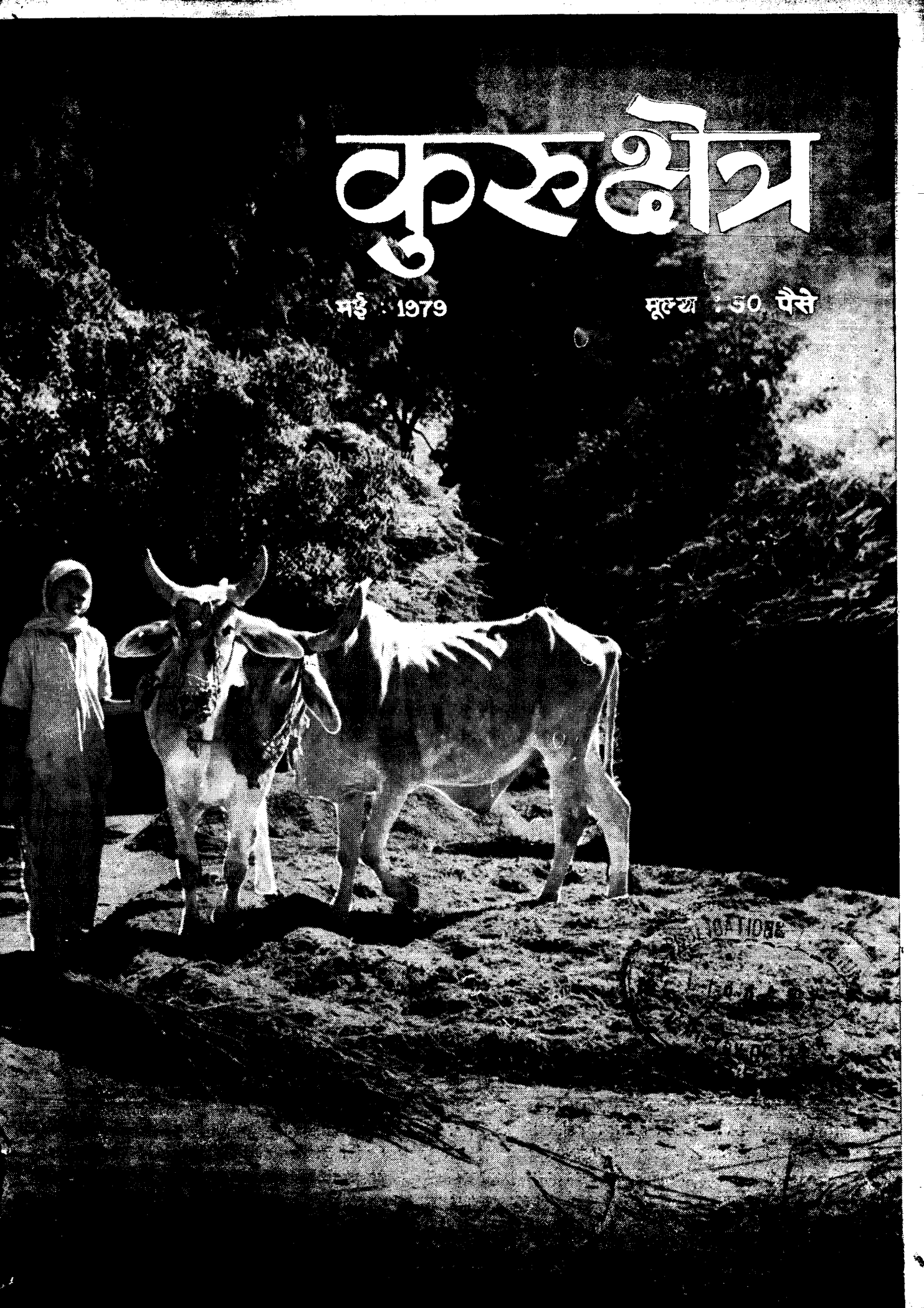

संपादकीय

बाल कल्याण की दिशा में नए कदम

हमारे बच्चे भारत की सम्पदा हैं और इस सम्पदा का हर तरह से पोषण, रक्षण तथा शिक्षण हमारा दायित्व है। देश की कुल जनसंख्या में 15 वर्ष से कम आयु के बच्चों की संख्या 42 प्र० श० और 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों की 21 प्र० श० है। देश में प्रति वर्ष 2 करोड़ 50 लाख बच्चे पैदा होते हैं जिनमें से 20 लाख बच्चों को मन्दिरों, मस्जिदों तथा गिर्जाघरों की सीढ़ियों पर फैंक दिया जाता है। 2 लाख बच्चे भिखारी बन जाते हैं। सम्पन्न वर्ग के बच्चों की समस्या यह है कि दफ्तर जाने वाले माता-पिताओं का उन्हें प्यार नहीं मिल पाता। बच्चों की इन समस्याओं से निबटने के लिए पंचवर्षीय योजनाओं की अवधि में विकास की दिशा में जो प्रयास किये गए उनसे कुछ लाभ बच्चों को भी मिला है। उनके स्वास्थ्य की स्थिति भी बेहतर हुई है और उनकी मृत्युदर में भी कमी आई है। 1950 में बच्चों की मृत्युदर 183 प्र० हजार थी जबकि 1971 के शुरु में घट कर 122 प्र० हजार रह गई। परन्तु फिर भी यह मृत्यु दर विकासशील देशों के बच्चों में मृत्युदर की अपेक्षा काफी ऊंची है और जरूरत है कि सभी कारगर उपायों से बच्चों को शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्वस्थ, सुन्दर और सबल बना कर उनकी मृत्युदर में कमी की जाए।

हमारे देश की 50 प्र० श० जनता गरीबी की रेखा से नीचे का जीवन बसर करती है और अधिकतर इसी वर्ग के बच्चे समुचित पोषण के अभाव में असमय में ही काल के कराल गाल में चले जाते हैं। दूसरे ये गरीब लोग अज्ञानता के कारण स्थानीय रूप से उपलब्ध पोषक खाद्य पदार्थों का भी समुचित उपयोग नहीं कर पाते। व्यावहारिक पोषाहार कार्यक्रम का उद्देश्य भी यही था कि लोग पोषक आहार उपलब्ध करने के निमित्त स्थानीय संसाधनों का पूरा उपयोग करें। 1970 में विशेष पोषण कार्यक्रम चालू किया गया। इसका उद्देश्य 6 वर्ष की आयु तक के बच्चों, आसरे की माताओं तथा दूध पिलाने वाली माताओं को पूरक पोषक पदार्थ उपलब्ध करना है। इस कार्यक्रम के अधीन इस समय 50 लाख माताएं और बच्चे उपलब्ध सुविधाओं का भोग कर रहे हैं। इसके अलावा, बालबाड़ी पोषण कार्यक्रम तथा विटामिन 'ए' कार्यक्रम भी इस दिशा मे कार्यशील हैं परन्तु इन सभी कार्यक्रमों में समन्वय का अभाव है और न उनमें एकरूपता है। कोई कार्यक्रम देश के किसी एक भाग में चालू है तो कोई किसी दूसरे भाग में। इसके अलावा, इन कार्यक्रमों के लिए जो धन उपलब्ध किया गया है वह भी इतने बड़े देश के लिए ऊंट के मुंह में जीरे के समान है। इन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अगस्त 1974 में बच्चों के बारे में राष्ट्रीय नीति की घोषणा की गई और यह निश्चय किया गया था कि बच्चों को उनके जन्म के पहले और बाद में तथा उनके विकास की अवधि में पर्याप्त सेवाएं उपलब्ध की जाएंगी। इस सन्दर्भ में एक उच्चस्तरीय 'राष्ट्रीय शिशु बोर्ड' का भी गठन किया गया है, जिसके अध्यक्ष स्वयं प्रधानमंत्री हैं। इस बोर्ड के माध्यम से केन्द्रीय और राज्य सरकारों के विभिन्न अभिकरणों तथा विभागों के कार्यों में समन्वय लाया जा सका है जिससे बच्चों के कल्याण का काम आगे बढ़ा है। बच्चों के बारे में राष्ट्रीय नीति के अधीन समन्वित शिशु विकास सेवाएं भी चालू की गईं और देश के प्राय: सभी राज्यों में इस योजना के अधीन अनेक परियोजनाएं चालू हैं।

इसमें शक नहीं कि केन्द्र और राज्यों की ओर से इस दिशा में जो प्रयास किए जा रहे हैं उनसे हमारे बच्चों का कल्याण होगा परन्तु हमें उनके विकास के अन्य पहलुओं पर भी ध्यान देने की जरूरत है। बच्चा जब पैदा होता है गीली मिट्टी की तरह होता है। गीली मिट्टी को जैसे सांचे में ढाला जाए वैसा ही रूप ग्रहण करती है। इसी प्रकार बच्चों को जैसे सांचे में ढाला जाएगा वे वैसे ही बनेंगे। माता पिता ही उनके सांचे हैं। बच्चें में अनुकरण की प्रवृत्ति होती है। पहले अपने मां-बाप का अनुकरण करते हैं। ऐसी स्थिति में जरूरी है कि पहले तो माता पिता बच्चे के आगे मन, कर्म और बचन से अपने जीवन को ऐसे रूप में प्रस्तुत करें जिससे बच्चे में बुरी आदत न पड़ने पाएं। दूसरे, उनमें ऐसे संस्कार डालने की कोशिश करें जिनसे उनके शुद्ध-सात्त्विक भावी जीवन का मार्ग प्रशस्त हो। यदि अड़ौस-पड़ौस का वातावरण गन्दा है तो बच्चे को उससे दूर रखने की कोशिश की जानी चाहिए। बच्चे गलत संगति में पड़कर भी बिगड़ जाते हैं. और समाज, राष्ट्र तथा सबके लिए दु:खदायी बन जाते हैं। अत: जरूरी है कि प्रारम्भ से ही उनकी शिक्षा-दीक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया जाए और उनमें अच्छे संस्कार डालने के यथाशक्ति प्रयत्न किए जाएं। यह वर्ष संसार भर में बाल वर्ष के रूप में मनाया जा रहा है। हम इसका मनाया जाना तभी सार्थक समझेंगे जब गांवों के गरीब बच्चों के शरीरिक तथा मानसिक रूप से विकसित होने के लिए समुचित साधन उपलब्ध किए जा सकें।

मज़दूर मंज़िल

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, एकांकी, कविता, संस्मरण, हास्य-व्यंग्य चित्र, फोटो आदि भेजिए। भाषा सरल हो और रचना का आकार 'कुरुक्षेत्र' के दो-ढाई पृष्ठ से अधिक न हो।

●

अस्वीकृत रचनाओं की वापसी के लिए टिकट लगा व पता लिखा लिफाफा साथ आना आवश्यक है।

●

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने, पता बदलने या अंक न मिलने की शिकायत, बिजनेस मैनेजर, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 से कीजिए।

●

सम्पादकीय पत्र-व्यवहार : सम्पादक कुरुक्षेत्र (हिन्दी), कृषि और सिंचाई मन्त्रालय, 467, कृषि भवन, नई दिल्ली के पते पर करें।

●

दूरभाष : 382406

एक प्रति 50 पैसे — वार्षिक चंदा 5.00 रु०

सम्पादक : महेन्द्र पाल सिंह

उपसम्पादक : कु० शशि चावला
मोहन चन्द्र भट्टन

आवरण पृष्ठ : जीवन अडालजा

कुरुक्षेत्र

वर्ष 24 — वैशाख-ज्येष्ठ-1901 — अंक 7

इस अंक में : **पृष्ठ संख्या**

कोई हाथ रहे न खाली, गांव-गांव खुशहाली 2
ब्रजलाल उनियाल
सहकारी संस्थाएं अन्तः सहकार का विकास करें 3
शक्ति त्रिवेदी
किसान और कानून 5
शोभा राम श्रीवास्तव
प्रदूषण से फसलों को खतरा 7
प्रभात कुमार शर्मा
नींबू जाति के फलों में सर्वश्रेष्ठ फल किन्नू 10
देवीसिंह नरूका
सोने की चिड़िया (कविता) 11
विभा त्यागी
संस्थागत क्षेत्र के जरिए कृषि ऋण का वितरण 12
बाल जीवन पर अभिभावकों के आचरण का प्रभाव 14
महाराज
विकासात्मक सहकारी शिक्षा 16
प्रो० एम० एस० परिहार
कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिए अनुसंधान 17
ईंधन और खाद की समस्या का हल: गोबर गैस प्लांट 19
शिवा विद्यार्थी
बन्धुआ मजदूरी की पद्धति—एक अभिशाप 21
सूर्यदत्त दुबे
दहेज प्रथा: एक अभिशाप 22
श्रीपाल सांगवान
भारतीय नारी समाज : कल और आज 23
तारादत्त निर्विरोध
राजस्थान के दूरदराज गांवों में मण्डी नियमन का प्रचार 24
डा० महेन्द्र मधुप
दिल्ली के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाएं 26
हरि भारद्वाज
एक सुख सबका (कहानी) 28
बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'
उर्वरक उद्योग आत्मनिर्भरता की ओर 30
प्रो० डा० एस० एम० अग्रवाल
किसान (कविता) 31
शशिधर खां
पहला सुख निरोगी काया 32
साहित्य समीक्षा 34
कुरुक्षेत्र के बारे में पाठक की राय 35
दूध उत्पादन के लिए समुचित पशु-पालन आवश्यक
राम सरूप कपूर और डा० टी० एस० सोहल 36

कोई हाथ रहे न खाली, गांव-गांव खुशहाली

ब्रजलाल उनियाल

गांधी थे युगद्रष्टा, वरना आज से आठ साल पहले 10 दिसम्बर, 1919 में यंग इंडिया में लिखे गये उनके अमर वाक्य आज के संदर्भ में भी क्यों कर उद्‌बोधक लगते? उन्होंने कहा था, 'बिना कुटीर उद्योग के भारत का किसान बरबाद हो जाएगा। केवल वह खेती की उपज के भरोसे काम नहीं चला सकता। उसे तो सहायक धन्धा भी चाहिए। मैं जानता हूं कि इसके लिए हमें क्रान्तिकारी नजरिया अपनाना होगा और मैं समझता हूं कि स्वराज तक पहुंचने का रास्ता 'स्वदेशी' से होकर ही गुजरता है। अंधाधुंध कल कारखानों से मसले हल नहीं होंगे ···इनसे होगा क्या? कुछ हाथों में पूंजी केन्द्रित होगी और इस तरह और भी गड़बड़ी पैदा होगी।

इस बात को सभी मनीषियों ने महसूस किया है और सरकार भी इस दिशा में प्रयत्न कर रही है। अब यह सिद्धान्त माना जा चुका है कि जिन वस्तुओं का उत्पादन लघु तथा कुटीर उद्योगों में किया जा सकता है उन्हें उद्योगों में किया जाना चाहिए। इस समय लघु उद्योगों की सूची में पांच सौ से भी अधिक चीजें शामिल की गई हैं जब कि पहले दो सौ के लगभग थीं। साथ ही लघु उद्योग की परिभाषा को नए परिप्रेक्ष्य में समझाना चाहिए। सरकार का विचार है कि लघु क्षेत्र व कुटीर विकास केन्द्रों को बड़े केन्द्रों व राज्यों से हटाकर जिले के मुख्यालयों में जल्दी ही लाया जाए। हर जिले से एक संस्थान होगा जो जिला उद्योग केन्द्र कहलाएगा। इस केन्द्र का काम गांव में उद्योग लगाने वालों को जरूरी सेवाएं व जानकारी मुहैया करना होगा।

छोटे उद्योगों को बढ़ाना क्यों जरूरी है, अब इन बातों के अधिक प्रचार की जरूरत नहीं है। इनमें न केवल कम पूंजी लगती है, बल्कि ये भारत जैसे गरीब देश के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं। यहां जन शक्ति तो बहुत है और पूंजी है कम। स्वभावतः अधिक जनशक्ति का समुचित उपयोग और कम पूंजी का विनिमय इन्हीं उद्योगों में संभव है। इनके जाल बिछ जाने से बेकारी जल्दी ही खत्म हो जाएगी। आए दिन मजदूरों और मिल मालिकों के झगड़ों का लम्बा सिलसिला कुछ हद तक तो कम होगा। यही कारण है कि ग्राम तथा लघु उद्योग पर बैठाई गई कर्वे समिति ने कहा था 'सफल लोकतंत्र के लिए खुद व खुद रोजगार का सिद्धान्त उतना ही महत्वपूर्ण है जितना कि अपनी सरकार का।'

आजकल हम देख रहे हैं कि शहर शैतान की आंत की तरह पसर रहे हैं, गंदगी और वायु प्रदूषण आदमी के लिए खतरा बन गए हैं। दाम बढ़ गए हैं, किराए बढ़ रहे हैं, रोग बढ़ रहे हैं, गंदी बस्तियां पनप रहीं हैं, शोषण बढ़ रहे हैं. तब आइए, गांव का समाकलित विकास करें, रोजगार के अवसर बढ़ाएं और पूरे देश को खुशहाल बनाएं।

इसके लिए सरकार ने कुछ कदम उठाए हैं, उनका संक्षेप में यहां उल्लेख किया जा रहा है।

भारत सरकार ने ग्राम उद्योग कार्यक्रम तथा ग्राम शिल्पी कार्यक्रमों को 2800 ब्लाकों में अमल में लाने के लिए तथा पूरी तरह रोजगार दिलाने के लिए क्षेत्र योजना के अन्तर्गत ब्लाकों में कार्यान्वयन के लिए शामिल करने की मंजूरी दे दी है।

जिला उद्योग केन्द्रों का यह प्रमुख दायित्व होगा कि वे कुटीर तथा लघु उद्योगों की उन्नति तथा विकास का कार्यभार संभालें परन्तु जब तक कि इसके लिए पूरी व्यवस्था व प्रबन्ध नहीं होता, तब तक खादी और ग्राम उद्योग आयोग, अखिल भारतीय हथकरघा मंडल, विकास आयुक्त (हथकरघा) आदि संगठन इस दिशा में अपने कार्यक्रमों के माध्यम से तथा वित्त मुहैया कर इन क्षेत्रों में काम करते रहेंगे। जिला उद्योग केन्द्र गतिविधियों के बीच समन्वय करेंगे। इसके लिए आवश्यक निधि भी उपलब्ध है।

सबसे पहले बिना उद्योग केन्द्रों को नीचे लिए क्षेत्रों में आंकड़ों का अध्ययन कर यह देखना होगा कि वहां ग्राम उद्योगों के लिए कितनी क्षमता व गुंजाइश है: अन्न उत्पादन, जिसमें अन्न संसाधन भी शामिल हैं, तम्बाकू सूती वस्त्र उद्योग, सिलेसिलाए कपड़ों सहित वस्त्र उद्योग, चमड़ा व चमड़े के पदार्थ, चीनी मिट्टी के बरतन बढ़ई का काम, लोहार का काम। इनके अलावा, खेती के औजार, मशीनरी ट्रैक्टर, पम्प सैट, डीजल इंजन, बिजली की फिटिंग आदि। इनके अलावा और भी बहुत से धंधे इस सूची में शामिल किए जा सकते हैं। देखने वाली बात तो यह है कि कौन से क्षेत्र में कौन सा धंधा भलीभांति पनप सकता है। एक बार जब जिला उद्योग केन्द्र इस बात का पता लगा ले तो उद्योग शुरू करने वालों को अपने चुने हुए उद्योग के लिए वित्तीय सहायता दी जा सकती है। जिन जिलों में ऐसे केन्द्र हैं वहीं जिला उद्योग अधिकारी आदि इन क्षेत्रों का पता लगाने का काम कर सकते हैं। ये लोग अन्य संस्थानों से इस काम में मदद ले सकते हैं।

यहां यह बताना असंगत न होगा कि समाकलित ग्राम विकास के दिशा निदेशक सिद्धान्तों के खंड एक के तीसरे अध्याय के 26 वें मद में इस बात की पहले से ही व्यवस्था मौजूद है कि मंजूरशुदा उद्योग में भाग लेने वाले व्यक्तियों या उनके प्रौढ़ बच्चों को प्रशिक्षण का पूरा खर्चा दिया जाएगा। इस व्यवस्था का पूरा लाभ उठाया जाना चाहिए। इसके लिए पौलिटेक्नीक, अखिल भारतीय हस्तकला-मंडल तथा ऐसी ही दूसरी संस्थाओं द्वारा जिन्हें कि सरकार द्वारा मान्यता मिली हो, प्रशिक्षण प्रबंध किया जाना चाहिए। इनके प्रशिक्षण की अवधि धन्धे को देखते हुए तीन से छः महीने हो सकती है। प्रशिक्षण पूरा होने पर इन प्रशिक्षार्थियों को किसी भी

बैंक द्वारा अधिकतम 5000 रुपये का ऋण दिया जा सकता है और इसी की और सहायता के लिए 33⅓ प्रतिशत और राशि यानि अधिकतम 1500 रुपये मिल सकते हैं।

इन कार्यक्रमों को अमल में लाने के लिए प्रत्येक समाकालित ग्राम विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 1000 परिवारों को हर साल चुना जाना चाहिए। इन परिवारों में से प्रत्येक परिवार को जैसा कि ऊपर बताया जा चुका है उद्योग इकाई की लागत के 33⅓ प्रतिशत तक यानी अधिकतम 1500 रुपये तक की सहायता मिल सकती है। इस सहायता की राशि का उपयोग औजार आदि खरीदने, सांझी सेवाओं को बढ़ाने अथवा सहकारी आधार पर काम करने आदि पर किया जा सकता है।

विपणन क्षेत्र में कार्य : एक खंड में 100 परिवारों के लिए वार्षिक वित्तीय सहायता विपणन के लिए भी दी जा सकती है। इनमें से कुछ मद जिनके लिए मदद दी जा सकती है वे हैं (1) वर्कशाप का रखरखाव व मरम्मत (2) दर्जी की दुकान (3) जूते की मरम्मत का धंधा (4) मसाले व पिट्ठी पीसने की यूनिट (5) रिक्शा खींचना आदि। इस सूची में और भी काम शामिल किए जा सकते हैं। जब राज्य सरकार के स्तर पर किसी विशेष काम को संबंधित ब्लाक योजना के एक दात्र के रूप मंजूरी मिल जाएगी तो प्रत्येक काम के लिए सम्बन्धित एजेन्सी अर्थात् छोटे किसानों के लिए विकास से मंजूरी दी जा सकती है। जिला उद्योग केन्द्रों को इन कार्यक्रमों को अमल में लाने के लिए पूरी तरह सन्नद्ध होना चाहिए और इसके लिए इनके प्रतिनिधि छोटे किसानों की विकास एजेन्सियों या सी० ए० डी० पी० के शासी निकाय में होने चाहिए।

लगभग 2000 खंड स्तर के विस्तार अधिकारी जो कि विभिन्न राज्यों या केन्द्रीय क्षेत्रों में काम कर रहे हैं, उन को विशेष उत्तरदायित्व सौंपा जाना चाहिए ताकि वे कार्यक्रम का प्रशासन सूचारु रूप से चलाएं और उसकी देखरेख करते रहें।

जिन जगहों में खंड स्तर पर विस्तार अधिकारी नहीं हैं या उतने नहीं हैं जितने होने चाहिएं तो वहां ग्राम उद्योग कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने के उद्देश्य से खंड स्तर के विकास अधिकारी नियुक्त करने की सलाह दी गई है। इस बीच दूसरी संस्थाओं की सहायता का उपयोग किया जा सकता है इन में अखिल भारतीय हस्तकला बोर्ड, विकास आयुक्त (हस्तकला) आदि हैं। आवश्यकता पड़ने पर इनके यहां के अधिकारियों को प्रशिक्षण दिया जाए ताकि वे खंड स्तर पर विस्तार अधिकारी का काम भी कर सकें।

यदि सरकार द्वारा निर्धारित उक्त योजनाएं निष्ठा से कार्यान्वित की जाएं तो अगले दशक में पूरे भारत में बेरोजगारी खत्म होना मुश्किल नहीं है। हां, सरकारी तंत्र को सजग, निष्ठावान और ईमानदार, बने रहना चाहिए। ●

सह–सम्पादक, खेती
317, कृषिभवन,
नई दिल्ली-110001

'सहकारी संस्थाएं अन्तः सहकार का विकास करें'

राष्ट्र नेताओं की सहकारी कांग्रेस में अपील

शक्ति त्रिवेदी

हाल ही में दिल्ली में अन्तर्राष्ट्रीय स्वरूपके लिए हुए 8वीं भारतीय सहकारी कांग्रेस हुई। इसका उद्घाटन किया प्रधान मंत्री श्री मोरारजी भाई ने। 9 से लेकर 11 मार्च, 1979 तक चलने वाली इस कांग्रेस में भारत तथा विदेशों से आए 2500 से अधिक प्रतिनिधियों, ने भाग लिया। सोवियत रूस, अमरीका, स्वीडन, इटली, युगोस्लाविया, मलेसिया, ईराक, जोर्डन, हंगरी, फ्रांस, फिजी, बंगला देश, ब्रिटेन, श्रीलंका, जाम्बिया, चेकोस्लोवाकिया, नेपाल और जर्मन जनवादी गणराज्य के प्रतिनिधियों ने इसमें भाग लिया। इसमें अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी संघ के डा० एस० के० सक्सेना, ने इसमें भाग लिया। इसमें 5 विदेशी सहकारी विशिष्ट नेताओं को भी पुरस्कार देकर सम्मानित किया गया।

प्रधान मंत्री के आगमन पर कांग्रेस के आयोजक राष्ट्रीय सहकारी संघ के अध्यक्ष श्री बी० एस० विश्वनाथन ने प्रधान मंत्री के सम्मान में स्वागत भाषण पढ़ा। उन्होंने कहा कि सहकारी क्षेत्र से लोकतंत्री मर्यादाएं उठती जा रही हैं। यह चिन्ता का विषय है। कई राज्यों में सहकारिता की ऐसी ही स्थिति है। उन्होंने कहा कि आज भारत में सहकारिता की प्लेटीनम जयंती है। इस आन्दोलन को देश में आरम्भ हुए 50 वर्ष पूरे हो चुके हैं। इस कांग्रेस का मुख्य विषय है, सहकारिता से आर्थिक लोकतंत्र। इसी पर सभी प्रतिनिधि चर्चा करेंगे। कमजोर वर्गों का हित सहकारिता में ही है। अमीर और गरीब की खाई को सहकारिता से ही पाटा जा सकता है।

प्रधान मंत्री श्री मोरारजी भाई ने सामाजिक न्याय पाने, विश्व शांति को बनाए रखने और लोकतंत्री मूल्यों की रक्षा करने के लिए सहकारिता को एक बड़ी आवश्यकता बताया। उन्होंने कहा कि इन महान लक्ष्यों को सहकारिता के माध्यम से तभी प्राप्त किया जा सकता है जब इस आन्दोलन में समर्पित नेता और कार्यकर्ता हों। उन्होंने उपस्थित नेताओं से कहा कि वे इस आन्दोलन को मजबूत बनाएं और खासकर देहात के नेताओं से जहां देश

की 80 फीसदी आबादी बसती है, उन्होंने कहा कि लोकतंत्र की रक्षा भी हम तभी कर सकते हैं, जब गांवों के स्तर तक सहकारिता का तंत्र काफी शक्तिशाली हो।

उन्होंने सभी नेताओं से अपील की कि वे इस आन्दोलन को शक्तिशाली बनाएं। लोकतंत्र की गारण्टी सहकारिता का मजबूत तंत्र ही कर सकता है। सामाजिक न्याय का पक्ष भी तभी सबल होगा जब समिति के सभी सदस्य एक दूसरे के प्रति सहकारी रुख अपनाएं। सहकार स्वतः ही आना चाहिए—मांगा नहीं जाना चाहिए वरना उसकी आत्मा का हनन हो जाएगा। जैसे कि भलाई भलाई होती है। उसका कोई सौदा नहीं कर सकता है। उन्होंने बताया कि मेरा भी सहकारिता से 55 वर्ष पुराना वास्ता है। उन्होंने बताया कि सहकारिता को राजनीति के हथकण्डों से भी बचाना है अन्यथा यह अपने रास्ते से गिर जाएगी। लकिन इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि सहकारी आन्दोलन में राजनीतिज्ञ लोग हिस्सा न ले सकें। राजनीति से मेरा मतलब यही है कि वे द्वेष या दरार डालने वाली राजनीति न बढाएं। इस विचार से राजनीति भी शुद्ध रहेगी और आन्दोलन भी मजबूत होगा। जब तक हम हर स्तर पर नैतिक बल और नैतिक कार्य नहीं कर पाएंगे, हम शांति की ओर नहीं जा सकेंगे।

उन्होंने कहा कि शिक्षा के अन्दर भी सहकारिता को प्रधानता मिलनी चाहिए। इसके लिए सभी को जाग्रत करना होगा। कदाचित इस कांग्रेस का आयोजन भी इसी लिए हो रहा है। कार्यकर्ता निष्ठावान होंगे तो उनके आचरण का औरों पर भी प्रभाव पड़ेगा। हमें यह देखना है कि हम दूसरों के प्रति कितना सहकार करते हैं। औरों से केवल सहकारी होने की अपेक्षा करना उचित नहीं है। हमें सभी को सहकारी भावना से बरतना है।

इस अवसर पर केन्द्रीय वाणिज्य, सप्लाई और सहकार मंत्री श्री मोहन धारिया ने सहकारिता आंदोलन की असफलताओं को दोहराया। उन्होंने कहा कि पहली असफलता तो यही है कि हमारी सहकारी उपभोक्ता व्यवस्था बहुत कमजोर है। यहां तक कि सारे देश में समान सहकारी आंदोलन नहीं पनप सका है। कहीं-कहीं तो उसने अच्छी जड़ें पकड़ी हैं और देहाती समाज पर गहरा प्रभाव डाला है अन्य क्षेत्रों में इसका प्रभाव विपरीत और नगण्य रहा है। राष्ट्रीय सहकारी नीति के प्रस्ताव में यह कहा गया था कि हमें सहकारी आन्दोलन को बाहरी प्रभाव से बचाना है जब कि यह हो रहा है कि कई राज्यों में सहकारिता का सारा झंडा सरकार ही उठाए हुए है उन्होंने ऐसे राज्यों से अपील की है कि वे सहकारी आंदोलन को स्वायत्त, आत्मनिर्भर और स्वविकसित बनने दें।

उन्होंने बताया कि इसका मतलब यह भी नहीं है कि सरकार आंखें, मूंदकर सारा तमाशा देखती रहे और सहकारी आन्दोलन में भ्रष्टाचार पनपता रहे। जैसे कि कई राज्यों में जानबूझ कर सहकारी आन्दोलन से कमजोर वर्ग के लोगों को दूर और अलग रखा गया। उन्होंने कहा कि सहकारी क्षेत्र में प्रबन्ध कुशलता को बढ़ाने की भी जरूरत है। यहां कुशल प्रबन्धों का एक कैडर बनाना होगा। उन्हें चुनकर प्रशिक्षित करना होगा ताकि वे सहकारी आंदोलन को कुशलता से चलाते रहें। राष्ट्रीय सहकारी प्रस्ताव के आधार पर एक 42 सूत्री सक्रिय कार्यक्रम भी बनाया गया है। फरवरी, 1979 में हुई सहकार मंत्रियों की बैठक में इस कार्यक्रम का पुनरीक्षण भी किया गया। अब यह समझा जाने लगा है कि ग्राम अर्थव्यवस्था को लोकतंत्री ढंग से सबल करने का माध्यम एक मात्र सहकारिता ही है। गरीबी-अमीरी की खाई भी इसी के द्वारा पाटनी है। सत्ता का विकेन्द्रीकरण भी योजना में सहकारिता के माध्यम से होगा, यह माना जा चुका है। यह सब सहकारिता के स्वस्थ विकास पर ही निर्भर करता है। जो सहकारी सरकार के बाहर नेतृत्व देने का काम कर रहे हैं उनका दायित्व है कि वे सहकारिता को सफल और सबल बनाएं।

देश की राष्ट्रीय विकास परिषद् ने 1958 में ही 'सेवा सहकारियों' को मान्यता दे दी। यह सहकारिता के माध्यम से ग्राम विकास करने का शुभ लक्षण है। अब राज्यों में प्राथमिक सहकारी समितियों को सक्षम बनाने के लिए पुनर्गठन किया जा रहा है। इस तरह समन्वित ग्राम विकास का काम सहकारियों के माध्यम से आरंभ हो चुका है। महिलाओं को सहकारी क्षेत्र में आगे लाने के लिए हर प्रबन्ध मंडल में एक स्थानीय महिला का आरक्षण रहेगा। उपभोक्ता क्षेत्र में एक स्थान महिला का आरक्षित रहेगा। उपभोक्ता क्षेत्र में भी उन्हें आगे बढ़ाया जा रहा है। ग्राम आवास और विकास निर्माण और बुनकरों के क्षेत्र में काम करने के लिए सहकारियों की काफी गुंजाइश है।

कांग्रेस के स्वर्ण जयन्ती समारोह का उद्घाटन हमारे उपराष्ट्रपति श्री वासप्पा दासप्पा जत्ती ने किया। उन्होंने बताया कि वास्तव में तो हमारे देश में 1904 से अब तक सहकारिता के 75 वर्ष पूरे हो चुके हैं। सहकारी समिति अधिनियम 1904 बनते ही देश में सहकारी आन्दोलन आरंभ हो गया। मगर हमारी सरकार ने दूसरी पंचवर्षीय योजना में उसे महत्व देना आरम्भ किया। आज तो सहकारी क्षेत्र अपने आप में एक शक्तिशाली स्तम्भ बन चुका है।

सहकारी जगत् को जिस नए क्षेत्र में काम करना है, वह है सहकारी आंदोलन में अन्तः सहकारी सम्बन्ध और सेवा व्यवस्था का विकास करना। सहकारियों के बीच सहकारी स्थापित होना आज बहुत ही आवश्यक समझा जाने लगा है। जनता सहकारी क्षेत्र से तब तक अच्छी अपेक्षाएं नहीं रख सकती जब तक कि वह स्वयं यह न देख ले कि सहकारी संस्थाओं और व्यक्तियों में आपसी तालमेल कितना है। अतः सहकारी सम्बन्ध इस समस्या की ओर पहले ध्यान दें। ●

वी-25, गुलमोहर पार्क
नई दिल्ली-110049

किसान और कानून

शोभा राम श्रीवास्तव

हमारे गांवों के लोग सीधे सादे तथा सहज विश्वासी होते हैं, वे बात के दूसरे पक्ष या कानूनी पेचीदगियों से अनभिज्ञ रहते हैं, कानूनों की सामान्य जानकारी न होने से गांव के लोगों को अपने दैनिक जीवन में कई प्रकार की परेशानियां उठानी पड़ती है, छोटी-छोटी बातों के लिए अदालतों का सहारा लेना पड़ता है, वकीलों के चक्कर काटने पड़ते हैं, और कानून पालन कराने वाली सरकारी एजेन्सी के अधिकारी और कर्मचारियों को खुश करना पड़ता है, दलालों, चालाक लोगों के चंगुल में फंस कर कई तरह का शोषण और उत्पीडन हमारे गांव वालों को मात्र कानूनों की सामान्य जानकारी न होने के कारण ही झेलना पड़ता है।

पिछली दो-तीन शताब्दियों से विशेष कर भारत में अंग्रेजी राज्य स्थापित हो जाने के बाद हमारे ग्रामीण जनों के मन में कानून के प्रति एक अजीब सी डरावनी अवधारणा बन गई है। कानून का नकारात्मक पक्ष इतना प्रबल हो गया है कि सामान्य आदमी कानून के वास्तविक उद्देश्य तथा अवधारणा को ग्रहण ही नहीं कर पाता है। पुलिस थाना, इन्सपेक्टर, तथा सरकारी अफसर का नाम सुनतेही गांव वालों के मन में अजीब सी घवड़ाहट पैदा हो जाती है और उनके सामने जाने से वह अकारण ही एक हीन तथा अपराधी भावना से ग्रसित हो जाता है।

वास्तव में कानून लोगों को परेशान करने के लिए नहीं—लोगों को सहुलियतें देने के लिए ही बनाए जाते हैं। इनका नकारात्मक पक्ष सजा, जुर्माना आदि इसलिए रखा जाता है जिससे कि लोग व्यवहार में भूल न करें तथा दूसरे लोग भी सावधान रहें, सजा के लिए सजा देना कानून का मकसद नहीं होता है।

सामान्य रूप से किसानों या गांव वालों को अपने रोजमर्रा के जीवन में जिन कानूनों से वास्ता पड़ता है उन्हें हम तीन भागों में वांट सकते हैं। किसी को शारीरिक या मानसिक आघात पहुंचाने, किसी की सम्पत्ति को क्षति पहुंचाने संबंधी फौजदारी कानून, लेन देन, जमीन जायदाद संबंधी दीवानी कानून तथा माल, सिंचाई, जंगल, बैंक आदि के कार्यों संबंधी विभागीय कानून।

फौजदारी कानून का मुख्य उद्देश्य है जियो और जीने दो। हमारा ऐसा कोई भी कार्य जो किसी अन्य को शारीरिक या मानसिक रूप से नुकसान पहुंचा याए दुख दे अथवा हमारे किसी काम से किसी की सम्पत्ति को कोई नुकसान पहुंचे—हमारे ऐसे सभी काम फौजदारी कानून की किसी न किसी दफा के अन्तर्गत जुर्म बनेंगे और हमें मुजलिम के रूप में थाना कचहरी अदालत में हाजिर होना पड़ेगा।

फौजदारी अपराध अधिकांशतः उत्तेजना की अवस्था में होते हैं। इन से बचने के लिए हमें सदा उत्तेजना से बचना चाहिए और विवाद का मौका आते ही उसे टालने का प्रयास करना चाहिए, अपने छोटे मोटे मतभेद, भलाई-बुराई के प्रसंगों की आपस में बैठकर बातचीत कर हल कर लेना हित कर रहता है। इसके लिए गांवों के सयाने और समझदार लोगों को सदा आगे आना चाहिए। उनका हमेशा यह प्रयास होना जरूरी है कि गांवों में झगड़े या मतभेद बढे न, उन्हें पैदा होने के साथ ही समाप्त कर देना चाहिए। इससे गांवों में शांति, व्यवस्था एवं अनुशासन स्थापित होगा।

हमें अपना जीवन-व्यापार चलाने के लिए लोगों से कई प्रकार का लेनदेन करना पड़ता है। जमीन जायदाद की खरीद फरोख्त चलती रहती है। सम्बन्धियों के बटवारे-हस्तान्तरण के प्रसंग भी आते जाते रहते हैं। इन मामलों से संबंधित विवाद ही दीवानी कानूनों के तहत आते हैं।

दीवानी कानूनों की अड़चनों से बचने का मूल मंत्र यह है कि लेन देन, खरीद फरोख्त बटवारे, हस्तान्तरण आदि के जो भी मामले हल करने हों वे साफ स्पष्ट तथा सदा लिखित रूप में होना चाहिए। जिन बातों की रजिस्ट्री कराना जरूरी हो उनकी रजिस्ट्री कराई जानी चाहिए, आपसी विश्वास या कच्ची लिखापढ़ी के भरोसे लेन देन आदि करना भविष्य में कई प्रकार के विवाद उत्पन्न कर देता है।

यह बात जरूर है कि लेन देन में जरा रूखा और संकोच हीन होना पड़ता है, शुरू में हमें या दूसरों को यह प्रीतकर न लगे, पर इस से मामले साफ तथा स्पष्ट होते हैं और भविष्य में किसी भी प्रकार के विवाद की संभावना नहीं रहती।

यह आम गलत प्रवृत्ति हमारे गांवों में, विशेष कर कम पढे लिखे और अनपढ़ लोगों में फैली हैं कि वे बिना मजमून पढ़े ही या उस का अर्थ पूरी तरह समझे वगैर ही उस पर अपने हस्ताक्षर बना देते हैं अथवा अपना अंगूठा लगा देते हैं। उनकी यही आदत बाद में उनके गले का जंजाल बनती है और उन्हें तरह तरह की परेशानियां उठानी पड़ती हैं।

इस विषय में हमारे ग्राम वासियों को बहुत सावधान रहने की जरूरत है। कभी भी बिना पढ़े या समझे, जल्दबाजी में या नशे की हालत में किसी के दबाव या बहकावे में आकर किसी कागज पर हस्ताक्षर या अंगूठा नहीं लगाना चाहिए। अगर आप कम पढे-लिखे या अनपढ हैं तो अपने विश्वस्त व्यक्ति से मजमून पढवा कर ही उस पर अंगूठा लगाएं।

लेन-देन अथवा खरीद फरोख्त, बटवारे हस्तान्तरण संबंधी सभी कागजात सुरक्षित रूप से संभालकर रखने चाहिए न जाने भविष्य में किस की कब क्या जरूरत पड़ जाए। कर्ज अदायगी। लगान, तकावी आदि की रसीदें भी संभाल कर रखनी चाहिए। इस से कभी उलझन नहीं होती है।

गांवों में किसानों का प्रमुख वास्ता माल विभाग से पड़ता है। इसे राजस्व विभाग या रेवन्यू विभाग भी कहते हैं। ग्रामीण स्तर पर पटवारी या लेखपाल इसका प्रमुख सरकारी कर्मचारी रहता है।

माल विभाग का मुख्य काम जमीन का रिकार्ड रखना तथा लगान वसूल करना है: किसानों को सबसे ज्यादा झंझट इसी विभाग में महसूस होता है।

पर जरा सी सावधानी रखने से यह विभाग जिसे आम किसान परेशानी का विभाग मानते हैं, किसानों का सब से अधिक हितैषी विभाग बन जाता है।

हमें अपनी जमीन का सही रिकार्ड अपने पास रखना चाहिए तथा मौके से उसकी जांच कर लेनी चाहिए। सरकारी भूमि या पडौसी की जमीन पर अतिक्रमण कानूनी अपराध है

और गांवों में झगड़े की मुख्य जड़ यही अवैध कब्जा ही है।

कभी कभी हम भूल से भी पडौसी की जमीन या सरकारी भूमि को अपना मान कर उसे जोतने लगते हैं। ऐसे मामलों की जुताई से पूर्व पटवारी या अन्य सक्षम अधिकारियों से मामले को स्पष्ट कर लेना जरूरी है।

जमीन की खरीद फरोख्त या हिस्सा बटवारे के समय खेतों की पथर गड़ी (सीमांकन) करालेना हितकर रहता है। बिना सीमांकन कराए किसी खेत को अपना समझना उचित नहीं होगा।

समय पर लगान अदा करने तथा लगान की रसीदें सुरक्षित रखने से भी हम कई प्रकार के राजस्व मामलों से मुक्ति पा जाते हैं। हिस्सा-बंटवारे या खरीद बिक्री के पश्चात् ही नामान्तरण की कार्यवाही पूरी करा लेनी चाहिए। इसमें विलम्ब होने से बाद में रिकार्ड ठीक नहीं रहता है तथा कई प्रकार की उलझन भी उत्पन्न हो जाती हैं।

किसानों का वनों से भी घनिष्ठ संबंध रहता है। खेती-किसानी के औजारों, हल-बखर बैलगाड़ी, मकान निर्माण-घरेलू उपयोग आदि के लिए लकड़ी उन्हें जंगल से ही प्राप्त होती है। उनके पशु भी चरने के लिए जंगलों में जाते हैं। जंगली पशुओं से किसानों को अपने खेतों की रक्षा भी करनी पड़ती है।

वनों का अधिकतम उपयोग हो सके, उनका उचित संरक्षण तथा विकास हो इसके लिए राज्य सरकारें समय-समय पर कानून बनाती रहती हैं। किसानों को इसकी जानकारी अपने वृत के फोरेस्टगार्डों से प्राप्त कर उसी के अनुरूप काम करना चाहिए। कभी निजी उपयोग या अन्य लालच से वनों की अवैध कटाई नहीं करना चाहिए। इस से किसानों का स्वयं का ही नुकसान है। वनों के समाप्त हो जाने से वनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जिससे खेती को हानि होती है।

वन्य प्राणियों की सुरक्षा और संरक्षण के लिए भी देश में कानून बना है। शिकार करना दंडनीय अपराध है। वन्य प्राणी हमारे राष्ट्रीय गौरव की वस्तु हैं; किसानों को न तो स्वय अवैध शिकार खेलनी चाहिए और न ही अवैध शिकार खेलने वालों को हाका तथा अन्य व्यवस्था में सहयोग देना चाहिए। ऐसे प्रकरण अगर उसकी नजर में आएं तो उसकी जानकारी तत्काल बन विभाग के अधिकारियों को दी जानी चाहिए।

आजादी के बाद देश में सिंचाई सुविधाओं का तेजी से विस्तार होता जा रहा है। सिंचाई के पानी के उपयोग के भी नियम बने हुए हैं जिनका किसानों द्वारा पालन किया जाना जरूरी है। किसानों को सदा अपनी पारी पर ही पानी लेना चाहिए तथा कभी ऐसे अवरोध पैदा नहीं करना चाहिए जिस से दूसरों को पानी लेने में कठिनाई हो।

एक बात सभी किसानों को ध्यान में रखनी चाहिए कि कोई भी सिंचाई कार्य सभी लाभान्वित होने वाले किसानों के सामूहिक हित को ध्यान में रखकर ही संचालित किए जाते हैं। इसलिए उनकी सामूहिक सुरक्षा तथा व्यवस्था भी सभी किसानों का सामूहिक उत्तर दायित्व है।

आज कल खेती के कामों की बढ़ोत्तरी के लिए विभिन्न बैंकों द्वारा किसानों को बड़ी मात्रा में कर्ज वितरित किया जा रहा है। इनके भी अपने नियम और कायदे हैं जिन का पालन किसानों द्वारा ठीक रूप से किया जाना जरूरी है।

इन मामलों में किसानों को एक बात दृढ़ प्रतिज्ञ होकर निभानी चाहिए कि बैंकों से जिस उद्देश्य से कर्ज लिया जाए उसका व्यय उसी कार्य में हो तथा उसकी वापसी भी नियमानुसार किश्तों में समय पर की जाए इससे ही किसानों को कर्जे से लाभ मिलेगा अन्यथा विकास के लिए बैंकों से लिया गया कर्जा किसानों के विनाश का कारण बन जाता है और उनकी जमीन जायदाद तक कुर्क होने की नौबत आ जाती है।

आज हमारे देश के हजारों किसान गले तक बैंकों के कर्जे से डूबे हुए हैं। मूलधन से दुगना तिगुना ब्याज हो गया है। इसका मुख्य कारण यह है कि इन किसानों ने कृषि विकास के लिए गये ऋण का सही उपयोग नहीं किया तथा कुआ, सिंचाई पंप आदि के लिए लिया गया रुपया शादी विवाह तीर्थयात्रा मेहमानदारी में उड़ा दिया। अब अनेक प्रकार की कानूनी परेशानियों में जकड़ गए हैं।

सामाजिक कल्याण तथा विकास के लिए भी अनेक कानून बनाये गए हैं। बाल विवाह की रोकथाम के लिए शादी योग्य लड़के लड़कियों की उर्म निश्चित की गई है, लड़के की 21 वर्ष और लड़की की 18 वर्ष। दहेज की कुप्रथा समाप्त करने के लिए दहेज का लेन देन भी कानूनन अपराध है। इन कानूनों का पालन भी किसान भाइयों द्वारा किया जाना चाहिए।

समाज से छुआछूत मिटाने, भेदभाव समाप्त करने के लिए हरिजनों को सभी सार्वजनिक स्थानों एवं प्रतिष्ठानों में प्रवेश दिया गया है। इन्हें इन स्थानों में रोकना कानूनी अपराध है।

जितना महत्वपूर्ण कानूनों का पालन करना है उतना ही महत्वपूर्ण कानून पालन कराने में सहयोग देना भी है।

हमारी न्याय व्यवस्था में गवाही को बड़ा महत्व दिया गया है। इसके पीछे यह मूल-सिद्धांत है कि आदमी देखी हुई बात को सच सच कहता है। गवाही की परम्परा शुरू कर हमने मानव के कथन पर विश्वास की गरिमा को स्वीकारा है।

गांवों के मुकद्दमों में गवाहों की भूमिका बड़ा काम करती है क्योंकि अक्सर गांवों के मुकद्दमों की सुनवाई गांवों से दूर कस्बों और शहरों की अदालतों में होती है जहां न्यायाधीश के सामने गवाहों के बयान ही प्रमुख होते हैं।

अतः हमें सदा सच्ची गवाही देकर अपराध रोकने और सही न्याय दिलाने में न्यायिक संस्थाओं की मदद करना चाहिए। झूठी गवाही अन्याय को बढ़ावा तो देती ही है, वह गांवों में गुटबाजी भी फैलाती है और कानून मात्र कागजी बन कर रह जाता है।

हमें यह सदा स्मरण रखना चाहिए कि यदि हमने अन्याय के खिलाफ न्याय दिलाने में सहायता नहीं की तो जब कभी हम पर अन्याय होगा तो कोई हमारी सहायता भी नहीं करेगा।

कानून समाज की सुव्यवस्था के लिए ही निर्मित होते हैं, उनका सही इस्तेमाल करके ही हम समाज में शांति व्यवस्था स्थापित कर अपने विकास के वातावरण का निर्माण कर सकते हैं। ●

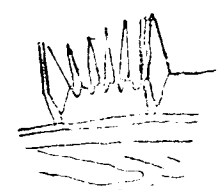

प्रदूषण से फसलों को खतरा

प्रभात कुमार शर्मा

जीव मंडल हमारा घर है परन्तु प्रश्न यह उठता है कि "क्या हम इसकी अपने घर की तरह देखभाल करते हैं? "यदि इसका उत्तर "हां" है तो हमारे कारखाने और उद्योग इसके वातावरण में गैस क्यों उड़ा रहे हैं? तालाब, नदी और समुद्र में उद्योगों के अरुचिकर मुहाने क्यों खोल दिए गए हैं? क्या जलीय वनस्पतियों और प्राणियों को शांतिपूर्ण सहअस्तित्व से जीने का अधिकार नहीं है? हम अपने वनों को क्यों काट रहे हैं? यह कूड़े-करकट को कम्पोस्ट क्यों नहीं कर सकते? दिनों दिन कम होने वाली पशु-पक्षियों की जातियों को बचाने के लिए हम क्या उपाय कर रहे हैं? क्या इस तथ्य का प्रामाणिक तौर पर निरीक्षण करते हैं कि भोज्य पदार्थों में कीड़े-मकोड़े मारने वाली दवाइयों के अवशेष नहीं हैं?

सामान्य नागरिक की इन चिन्ताओं के विषय का नाम है–प्रदूषण। प्रदूषण वातावरण के लिए प्रतिकूल वायु, भूमि और पानी के भौतिक और रासायनिक गुणों में परोक्ष परिवर्तन को कहते हैं। प्रदूषण का मुख्य कारण आदमी द्वारा प्रकृति के वरदानों का अविवेकपूर्ण उपयोग है। इनका वर्णन इस लेख में किया गया है।

वायु प्रदूषण : प्रकृति में थोड़ी मात्रा में हानिकारक गैस को अपने चक्र से निकाल बाहर करने की क्षमता होती है। इस वैज्ञानिक युग में उद्योगों की बाढ़ आ गई है। इनकी चिमनियां निरन्तर, मानव, जानवर और पेड़-पौधों के जीवन के लिए हानिकारक गैस निकालती रहती हैं। वायु प्रदूषण के वैज्ञानिक अध्ययन के लिए इन्हें दो भागों में बांटा गया है :—

(1) **प्रधान स्रोत** : इस श्रेणी में दो स्रोतों से गैस आती है। (अ) दहन से प्राप्त —इसमें कार्बन मोनोआक्साइड, नाइट्रोजन के आक्साइड, इथाइलीन आदि आती हैं।

(ब) औद्योगिक स्रोतों से निकलने वाली गैस, सल्फर डाइआक्साइड, फ्लोरीन, भारी धातुएं, सीमेन्ट की धूल, उड़ी हुई राख, फसल पर छिड़की गई दवाइयों के हवा में व्याप्त कण आदि हैं।

अप्रधान स्रोत : प्रधान स्रोतों से निकलने वाली गैसों की प्रतिक्रिया से जो गैस बनती है, वे इस श्रेणी में सम्मिलित की गई हैं। ये जीवन के लिए बहुत नुकसानदेह हैं। इनमें ओजोन, परआक्सीएलालनाइट्रेट आदि आती हैं। पेट्रोल, डीजल से चलने वाले वाहनों से निकलने वाली गैस और सूर्य की किरणों की प्रक्रिया से ओजोन बनती है। आप ने देखा होगा कि आपका स्कटर खराब पेट्रोल के कारण 'छी' 'छी' की आवाज निकालने लगता है। इसे रोकने के लिए पेट्रोल में टेटा इथाइल लैड(Tel) नामक रसायन डाला जाता है। लैड पौधों के लिए हानिकारक है। ये रोजमर्रा के निरीक्षण की बात है कि जिन सड़कों पर अधिक ट्रेफिक होता है उनके किनारे की घास भूरी काली या मरी हुई होती है।

धूल उड़कर पत्तियों पर जम जाती है। इससे प्रकाश संश्लेषण की गति धीमी हो जाती है। इसके अलावा, धूल में फफूंद, बीमारियों के बीजाणु भी होते हैं जो पौधों को कई प्रकार से नुकसान पहुंचाते हैं। प्रदूषण के सभी स्त्रोतों को उनके निकलने के स्थान पर रोकना चाहिये। (1) चिमनी से निकलने वाली गैस को यदि एक पानी पटकने वाले कमरे से गुजारें, तो कार्बन के कण सल्फर डाई आक्साइड, कार्बन मोनो आक्साइड, सीमेन्ट की धूल, राख आदि वहीं रह जाती हैं। (2) रासायनिक क्रिया से अन्य हानिकारक गैस में परिवर्तन करके चिमनी से निकाला जा सकता है। (3) चिमनी के साथ छानने वाली या अवक्षिप्त करने वाली और जमा करके फेंकने वाले उपस्कर भी बनाए गए हैं। (4) पौधाघर में कार्बन के कण छानने वाली पतली जाली लगायें (5) चिमनी के गैस में हवा मिलाकर छोड़ें ताकि वातावरण में जहरीली गस की मात्रा कम रहे। (6) चिमनी की ऊंचाई बढ़ायें।

बम्बई, कलकत्ता. कानपुर, अहमदाबाद आदि जैसे उद्योगों के जमघट वाले शहरों में कभी-कभी भौगोलिक परिस्थिति, मौसम, धूप आदि के कारण गैस शहर के ऊपर छा जाती है। इससे जीवन को बहुत क्षति होती है। लंदन और लास एन्जिल्स में ऐसा प्रायः होता रहता है। यह चाहिए कि वायु प्रदूषण पर भारत में प्रारम्भिक स्थिति में काबू ही कर लिया जाए। यदि फसल के ऊपर किसी प्रदूषक का कुप्रभाव पड़ता है तो किसान को चाहिए कि इस प्रदूषक से अप्रभावित जाति के पेड़-पौधों को उस फसल के चारों तरफ लगाएं। ओजबान, एसकार्बिक और कुछ फफूंदनाशक जैसे जिनेब, मानेब, फुरबान, धीरान और डाइक्लोन के छिड़काव, से प्रदूषण के प्रभाव को कम किया जा सकता है। चीन में किये गए अध्ययन से पता चला है एक रसायन की फैक्ट्री के पास 17,000 विभिन्न जातियों के पेड़ लगाने से वातावरण में फ्लोरिन की मात्रा 5 वर्ष में 20 प्रतिशत घट गई। अखरोट, शहतूत के पेड़ लगाने से सल्फर डाइ आक्साइड, आम, अंजीर, कनेर के पेड़ लगाने से फ्लोरीन और ताड़ फाइकस, इलेस्टिका लगाने से 340 कि० मी० क्षेत्र में हाइड्रोजन-फ्लोराइड प्रदूषण को रोका सका है।

*सस्य एवं मृदा विज्ञान, केन्द्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, शिमला।

2. भूमि क्षय : पृथ्वी पर जीवन उसकी ऊपर की सतह पर उगने वाली वनस्पति पर आश्रित है। 1 इंच मिट्टी की तह जमने में 2000 वर्ष लगते हैं। परन्तु उसका विनाश होने में समय नहीं मालूम पड़ता। भारत के 3280 लाख हैक्टर भूमि क्षेत्रफल में 910 लाख हैक्टर भूमि कृषि योग्य है। 70 लाख हैकटर भूमि या तो मरुस्थल बन गई है या बनने वाली है। 28 लाख हैक्टर भूमि क्षारीय है। प्रतिवर्ष 60,000 लाख टन मिट्टी बह जाती है। इसके साथ डाले गए उर्वरक, खाद, दवाइयां कार्बनिक द्रव्य, ह्यमस, माइक्रो फलोरा की अतीव क्षति का परिणाम विशालकाय है।

बरसात के पानी की बूंद मिट्टी के ऊपर तीव्र गति से गिरती है और मिट्टी के छोटे से हिस्से को पूरे भाग से अलग कर देती है। मिट्टी के अलग हुए टुकड़े पानी के साथ ढलाई की ओर बहने लगते हैं। अधिक बरसात के कारण जमीन पर छोटी छोटी नालियां बन जाती हैं। इनमें से मिट्टी बहती रहती है। समय के साथ इन नालियों की गहराई बढ़ जाती है और और शनै शनै ये मिट्टी की पूरी ऊपरी सतह को बहाकर जमीन को बंजर, उबड़-खाबड़ और गहरे गड्ढेदार बना देती हैं। थार रेगिस्तान या समुद्र के क्षेत्र में तेज हवा रेत को उड़ाकर खेत पर बिछा देती है। भारत में आजादी के पश्चात् इस समस्या को मूल समस्या माना गया है। पंचवर्षीय योजनाओं में कई संस्थानों की स्थापना समस्या की गई जो क्षेत्र विशेष के लिए भूमि को कृषि योग्य बनाने के लिए अनुसंधान में लगे हैं,। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् ने देहरादून, जोधपुर, करनाल में संस्थान खोले हैं।

भूमि क्षय रोकने के मुख्य सुझाव निम्न हैं—

(1) पर्वत पर अधिक वनस्पति नहीं होती। इनका क्षय रोकने के लिए (अ) पत्थरों के बांध बांधे (ब) बबूल, शीशम, आदि के पेड़ गड्ढे बनाकर, लगाएं। इससे इनका प्रभाव कृषि योग्य भूमि पर नहीं फैलेगा।

(2) भारत में करीब 4 माह वर्षा और 8 माह धूप रहती है। यदि, मिट्टी में कुछ बोया न गया हो तो मिट्टी के कण धूल से अलग थलग होने लगते हैं और बरसात द्वारा आसानी से बह जाते हैं भूमि पर कुछ न कुछ अवश्य लगाएं।

(3) अम्लीय भूमि में पी० एच० के हिसाब से तौलकर चूना हल से 15 से० मी० सतह में डालें।

(4) यदि भूमि क्षारीय हो तो पी० एच० के हिसाब से तोलकर जिप्सम 15 से० मी० सतह में हल से डालें। चावल उगाएं, पानी भरा रहने दें।

(5) मरुस्थल भूमि को समतल करें। इसमें बेर, घास आदि लगाएं।

(6) मिट्टी का प्रकार, मोटाई, वर्षा, तापमान, वातावरण आदि का गहन अध्ययन करने के बाद ही सिंचाई की विधि अपनाएं।

(7) मिट्टी की जांच करके उसमें, आवश्यक मात्रा में उर्वरक, खाद, दवाइयां डालें। छिड़काव, सिंचाई समय समय पर करें।

जल-प्रदूषण : हाल ही में गोवा, में 'जुआरी एग्रो-केमिकल्स' को सरकार ने नोटिस भेजा कि वे उत्पादन बंद कर दें क्योंकि उनके बहाये कूड़े से बहुत मछलियां मर गई। औद्योगिक उत्प्रवाह से बम्बई में तटों पर ढेरों, मछलियां सड़ती पाई जाती हैं। जापान में विषैली मछलियों के खाने से मिनामोटा बीमारी फैल गई।

औद्योगिक उत्प्रवाह में रसायन, भारी तत्व, लैड, निकिल और तेजाब होते हैं। बरसात में बहे पानी में खेतों में डाली दवाइयों के अवशेष और उर्वरक होते हैं। ये पदार्थ पानी में घुली आक्सीजन से क्रिया करके उसे समाप्त कर देते हैं। घुली हुई आक्सीजन खत्म होने से पानी के अन्दर के पौधे ऊपर आ जाते हैं। साथ ही पानी के जीव-जन्तुओं का जीवन दुरूह हो जाता है। वनस्पति के पानी के ऊपर आने के कारण नावों का चलना, मछली मारना, यातायात, पनबिजली आदि कार्य असम्भव हो जाते हैं। सबसे अधिक प्रभाव एक छोटे से पौधे फाइटोप्लैक्टोन पर पड़ता है जो कि पानी के तल पर रहता है। ये पौधा विश्व की अधिकतम कार्बनडाइ-आक्साइड को आक्सीजन में बदलता है। समुद्र तल पर वनस्पति आने के कारण ये मर जाते हैं। पानी में प्रकाश भी कम जाता है।

जमीन के ऊपर की मिट्टी भुरभुरी होती है। इसमें हवा और पानी सोखने की बहुत शक्ति होती है। ये मिट्टी बरसात के पानी को सोख लेती है और इस तरह बाढ़ को नियन्त्रित किया जा सकता है। जब मिट्टी पर वनस्पति नहीं होती तो बरसात के कारण ये बह जाती है। ये बही हुई मिट्टी बांध में जम जाती है और उनके जीवन को कम कर देती है। नीचे की मिट्टी सख्त होती है। वह पानी को नहीं सोखती। बरसात का पानी समुद्र में पहुंच जाता है। इस कारण जमीन में पानी का तल नीचा होता जाता है। फलतः प्रति वर्ष हमें कुएं गहरे कराने पड़ते हैं।

समुद्र में किए अणु विस्फोट के कारण न केवल समुद्र के प्राणियों और पौधों को खतरा है परन्तु ये भी भय है कि कहीं बर्फ की चोटियां न पिघल जाएं। इससे सारे संसार का मौसम बदल सकता है।

जल प्रदूषण की समस्या विश्वव्यापी है। यूनाइटेड नेशन्स आर्गनाइजेशन, को चाहिए कि पूरे विश्व में इसे रोकने के लिए कार्यक्रम तैयार करें। सरकार ऐसे उद्योगों को प्रोत्साहन दे जिसमें अवशेष कम से कम हों।

बन एरिक पी० एकहोम के एक सर्वेक्षण से पता चला है कि विश्व की 1/3 जनसंख्या भोजन के लिए लकड़ी पर आश्रित है। विश्व में जितनी लकड़ी प्रति वर्ष काटी जाती है उसकी आधी जलाने के काम आती है। भारत में 19 लाख हैक्टर भूमि से जंगल को हटाया गया है। इससे भूमि क्षय बहुत बढा है। इससे आग लगने की संभावना भी बढ़ी है। जंगल कटने से मौसम पर भी प्रभाव पड़ता है।

भारत में सरकार ने वन महोत्सवों द्वारा वन की सुरक्षा एवं महत्व पर जोर दिया है। पेड़ों पर जख्म करने से उन पर 'ब्लैक हार्ट' बीमारी फैलती है। पुराने पेड़ इस रोग से शीघ्र ग्रसित होते हैं। परिपक्व या प्रौढ़ होने पर इन्हें गिरा देना चाहिए। लकड़ी न मिलने पर लोग गोबर जलाते हैं जिसे खेतों में डाला जाना चाहिए। आम व्यक्ति की अभिरूचि और सहयोग से ये कार्यक्रम सफल हो सकता है।

उत्सर्ग : उत्सर्ग मनुष्य के जीवन चक्र का एक प्रमुख भाग है। इससे वातावरण में आए

पदार्थ वातवारण में वापस पहुंच जाते हैं। इस समस्या को निम्न भागों में बांटा गया है —

(क) मानव—बड़े शहरों में म्यूनिसिपल कमेटियों या कारपोरेशन ने जमीन के अन्दर नाले बनाकर इस समस्या का निराकरण किया है। गांवों में इसे कम्पोस्ट किया जा सकता है।

(ख) अन्य,—साबुन, बोरेक, विद्युत् अपघटन उत्सर्ग, डी० डी० टी०, फास्फेट, भारी तत्व, आदि जो सभ्य समाज में रोजमर्रा के उपयोग की चीजें बन गई हैं, उसके ही लिए परेशानी का कारण हैं। इन चीजों का जीव विज्ञान चक्र नहीं है। ये सड़ती नहीं हैं। ये नालियों में जम जाती हैं और पानी का आवागमन रोक देती हैं। इस प्रकार के उत्सर्ग को एक बड़ी मोटी लोहे की टंकी में सोडे के साथ मिलाकर (ताकि कम पावर खर्च हो), विद्युत् अपघटन करना चाहिए। इस प्रकार धनात्मक भारी तत्व मूरक्यूरी, लैड, निकिल, कैडमियम आदि और ऋणात्मक ग्रुप साइनाइड अलग हो जाते हैं। वैसे ऐसी चीजों के उपयोग को कम प्रोत्साहन देना चाहिए, फिर इन्हें अलग-अलग दबाया जा सकता है।

(ग) खेती के उत्सर्ग चावल की भुसी, गन्ने की खोई, कपास की चित्ति, गेहूं और धान का तृण के इस्तेमाल करने के चार तरीके हैं (1) भस्म करना (2) कम्पोस्ट (3) पुन चक्रण (4) ताप अपघटन (5) जानवरों को खिलाने के लिए उपयोग :

रेडियो-धर्मिता विज्ञान और तकनीक का युग आणविक युग में एक धमाके के साथ परिवर्तित हुआ। यह धमाका हुआ 5 अगस्त, 1945 को होरोशिमा में : परिणाम इन्सान जानवर, पेड़-पौधे समूल नष्ट हो गए और मिट्टी, पानी, हवा प्रदूषित हो गई। रेडियोधर्मिता वाले तत्व वायु, पानी और मिट्टी में व्याप्त हो गए। भोजन करना दुष्वार हो गया। एस० आर० 90 तत्व जो कि अस्थि मज्जा में जम जाता है और केन्सर, अनुवांशिकी प्रभाव, नपुंसकता पैदा कर सकता है, वायुमण्डल में व्याप्त था। वायु से ये अणु मिट्टी म गिरते हैं मिट्टी से ये पेड़ों द्वारा ग्रहण किए जाते हैं फिर ये आदमी को नुकसान पहुंचाते हैं। मिट्टी में से इन्हें हटाने के लिए मिट्टी में ई० डी० टी० ए०, डी० टी० पी० ए०, एफ० ई० डी० टी० ए०, जिप्सम डालें ताकि ये पदार्थ संकुलित होकर निष्क्रिय हो जाए।

कीटनाशक दवाइयाँ : खाद्य पदार्थों का उत्पादन साधारण सुव्यवस्थित पारिस्थितिक तंत्र द्वारा होता है। इसम आदमी अन्य जाति के प्राणियों से स्पर्धा करता है। यदि आदमी को अधिक भोजन चाहिए तो उसे इस स्पर्धा को कम करना पड़ेगा। इसके लिए कीटनाशक दवाओं का प्रयोग अत्यन्त आवश्यक है। ये दवाएं कीड़ों के जीवन चक्र में जाकर उसे मारती हैं या उसके स्पर्श करने से उसे मारती हैं। ये दवा अपने कार्य के पश्चात्, हवा, पानी, मिट्टी के सम्पर्क से अप्रभावशाली बन जाएं ऐसा कृषि वैज्ञानिक चाहता है, परन्तु जब ये रसायन प्राकृतिक वातावरण में जहरीले और घुलनशील होकर प्रवेश करते हैं तो जीवन के लिए खतरा बन जाते हैं। भारत में किसान को इस बात से भय की आवश्यकता नहीं है। कारण यह है कि किसी भी कीटनाशक को पहले विभिन्न मात्राओं में विभिन्न फसलों पर विभिन्न कीड़ों को मारने के लिए परीक्षण करके देख लिया जाता है। उस कीटनाशक के अवशेष का प्रभाव कितनी मात्रा डालने पर कम से कम रहा, इसका कुछ वर्ष अध्ययन, और अनुसंधान करने के बाद ही सरकार उसके उत्पादन का प्रमाण पत्र देती है। लेबिल पर उसको मात्रा, घोल बनाने का तरीका, किस फसल में कब कितनी बार डालना है. लिखा रहता है। किसानों को इन निदेशों का पालन करना चाहिए।

कीड़ों के विनाश के लिए इंटीग्रेटिड पेस्ट कन्ट्रोल कार्यक्रम तैयार किया गया है। इसमें कीटनाशकों के उपयोग के साथ अन्य विधियों को भी संलग्न किया गया है जैसे बिजली के बल्ब लगाकर कीड़ों को जमा करना, खेत के चारों ओर छोटा गड्ढा खोदना, कीड़ों की बीमारियों को रोकना, कीड़ों को खाने वाले कीड़े पालना, नपुंसक कीड़े छोड़ना, व्याधि प्रतिरोधी फसल की जातियां तैयार करना आदि।

आर्थिक तथ्य और प्रदूषण से फसल को क्षति : इन दोनों में अन्तर हो सकता है। पत्तियों का मुड़ना, टूट जाना मुरझाना आदि और कम पैदावार, क्वालिटी में अन्तर, प्रकाश संश्लेषण की दर में परिवर्तन। पौधों में वायु प्रदूषण के लक्षण, पौधे के रोग, पोषक तत्वों की कमी आदि के लक्षणों के समान ही होते हैं। कबोक का पेड़ क्लोरीन के; सूर्यमुखी, बाजरा गेहू, सल्फर डाई-आक्साइड के और कपास, आड़ू, आलू बुखारा, हाइड्रोजन फ्लोराइड के प्रदूषण के चिन्हों को स्पष्ट बताते हैं। यदि कोई कार्यक्रम, जो इन सबको ध्यान में रखकर बनाया जाए तो वह अवश्य सफल होगा। इसके लिए जनता की इन तथ्यों के बारे में जानकारी, जागरूकता और सहयोग की आवश्यकता है। ●

सस्य एवं मृदा विज्ञान,
केन्द्रीय आलू अनुसंधान
शिमला (हि०प्र०)

नींबू जाति के फलों में सर्वश्रेष्ठ फल किन्नू

देवीसिंह नरूका

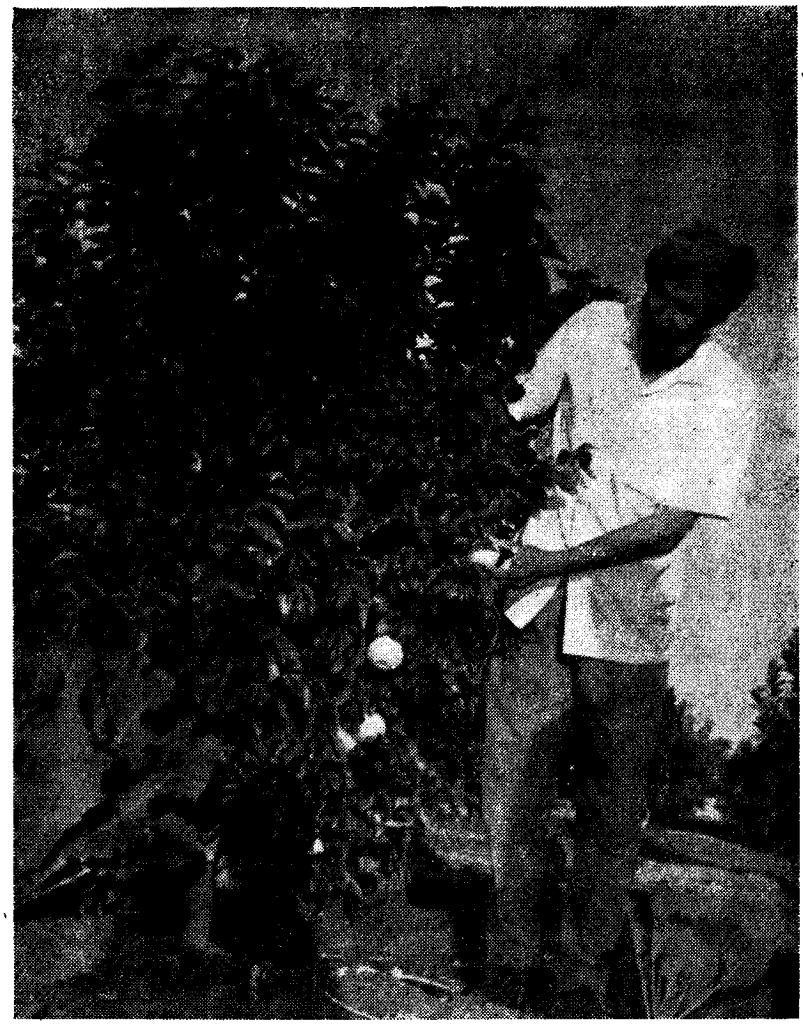

किन्नू का फल दिखाते हुए कृषि पंडित सरदार बलवन्त सिंह

फलों का राजा आम माना जाता है । किन्तु नींबू जाति के फलों में किन्नू को श्रेष्ठ कहा जाए तो अनुचित नहीं होगा। मालटा और संतरे के मिलन अथवा क्रोस से इसका पौधा सर्वप्रथम केलीफोर्निया में तैयार किया गया था और सन् 1935 में वहां इसके उद्यान लगाए गए। लगभग 45 वर्ष पहले यह पौधा भारत व पाकिस्तान में लाया गया । भारत में इस पौधे के विस्तार का श्रेय पंजाब के कृषि विश्व विद्यालय, लुधियाना को है। पूर्वी पाकिस्तान के लायलपुर गुजरांवाला और स्यालकोट में इसके बहुत बड़े बड़े बाग हैं । वहां से यह फल पर्याप्त मात्रा में विदेशों को भी निर्यात किया जाता है।

राजस्थान के अन्न भंडार जिला श्रीगंगानगर में कृषि पंडित बलवन्तसिंह का किन्नू का बड़ा उद्यान है। इनके 27 बीघा क्षेत्र में 1800 किन्नू के पेड़ हैं । जब उनसे इस फल के उत्पादन के बारे में जानकारी प्राप्त की गई तब उन्होंने बताया कि सन् 1962 में वे सर्वप्रथम किन्नू के पौधे पंजाब कृषि विश्व-विद्यालय, लुधियाना से लाए थे । 16-17 वर्ष के ये पेड़ अब पूरे यौवन पर हैं और भरपूर फल दे रहे हैं । भली प्रकार से संभाल रखने पर 25 वर्ष तक खूब फल देते रहेंगे । एक एक पेड़ को 1000 से 2000 तक फलों से लदा देखकर आंखें देखती ही रह जाती हैं । भार से टहनियां टूट नहीं जाएं इसलिए इन्हें लकड़ियों का सहारा लगा दिया जाता है।

मौसम :—दिसम्बर, जनवरी में नारंगी रंग के फलों से लदे सघन हरे छोटे छोटे घेरदार वृक्षों की छटा देखते ही बनती है । मार्च में फूल आकर फल लगना शुरू हो जाते हैं और यह फल दिसम्बर के अंत में पक कर तैयार हो जाते हैं । फरवरी माह तक यह फल प्राप्त होते रहते हैं । कोल्ड स्टोरेज में रखने पर अप्रैल मई माह तक भी किन्नू का रसास्वादन किया जा सकता है ।

पौधे लगाना :—किन्नू के पौधे लगाने का समय जुलाई से सितम्बर और फरवरी व मार्च माह तक है । पौधे 20″ 20″ की दूरी पर लगाए जाने चाहिएं । जिस किसी उद्यान व पौधशाला से पौधे लें, इससे पहले यह भी जांच कर लें कि जिस मदर प्लांट से बंडली ली गई है, उसके कोई बीमारी (वाइरस) आदि तो नहीं है । बीमार मदर प्लांट से बंड तैयार

करने से पौधे कमजोर होकर 3-4 साल में नष्ट होना शुरू हो जाते हैं ।

किन्नू की बंड जट्टी खट्टी, जलन्धरी खट्टी, खन्ना खट्टा, जमीरी और रंगपुर लेमन पर लगाई जा सकती है । खन्ने खट्टे पर लगाई गई बड से प्राप्त फल जट्टी खट्टी की अपेक्षा अधिक स्वादिष्ट और मीठे होंगे । इस संबंध में अनुसंधान किये जा रहे हैं कि इनमें से किस रूट स्टाक पर लगाए गए पौधों की उम्र अधिक होती है ।

किन्नू का पौधा लगाने से पहले तीन फीट गहरा और तीन फीट चोड़ा गड्ढा खोदकर ऊपर की मिट्टी में मिलाकर 60 किलोग्राम गली हुई खाद डाल दें । गड्ढे के नीचे की मिट्टी बाहर निकाल कर खेत में बिखेर दें और गड्ढे को पानी से भर दें । जमीन के पानी सोंखने के पश्चात् तैयार होने पर पौधा लगा दें । प्रति वर्ष पौधे को 1 से 3 क्विंटल गोबर की खाद दी जावे । तीन वर्ष पश्चात् पूरे खेत में खाद दें और पूरे खेत में ही पानी दें क्योंकि पेड़ की जड़ें चारों और फैल जाती हैं । पेड़ों की सिंचाई गर्मियों में 10—15 दिन में और सर्दियों में माह में एक बार अवश्य करनी चाहिए । प्रत्येक पौधे को प्रतिवर्ष 4 किलोग्राम सुपर फास्फेट और 2 किलो यूरिया दिया जाना चाहिए । तीसरे वर्ष में किन्नू के पेड़ में फल आना प्रारंभ हो जाता हैं ।

लाभप्रद—मौसम में किन्नू का फल 25 से 30 रुपये प्रति सैंकड़ा तथा इसके पश्चात् कोल्ड स्टोरेज में रखकर बेचने से 40 से 50 रुपये प्रति सैंकड़ा तक बिकता है । फल साधारण संतरे से बड़े आकार का, फांके संतरें जैसी, रस संतरे से ज्यादा और स्वादिष्ट होता है । माल्टा से अधिक स्वादिष्ट और फलदार होने के कारण ऐसा लगता है कि शीघ्र ही यह माल्टा को पीछे छोड़ देगा । यह फल विटामिन 'सी' से भरपूर होता है जिसके सेवन से रक्त में लालिमा आती है और हड्डियां मजबूत होती हैं और पाचन शक्ति बढ़ती हैं।

पंजाब, हरयाणा, राजस्थान और उत्तर-प्रदेश की गर्म खुश्क जलवायु में इसकी खूब पैदावार ली जा सकती है । मटियार मिट्टी अधिक उपयुक्त है । रेतीली मिट्टी में खाद अधिक देनी पड़ती है ।

कृषि पंडित सरदार बलवंतसिंह के उद्यान के किन्नू की पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के भूतपूर्व उपकुलपति श्री महेंद्रसिंह रंधावा ने भूरि-भूरि प्रशंसा की है । गंगानगर के भूतपूर्व जिलाधीश तथा वर्तमान में राजस्थान के राज्यपाल के सचिव श्री ईश्वरचन्द्र श्रीवास्तव ने फार्म का अवलोकन करने के पश्चात् वहां की दर्शक पुस्तिका में लिखा, "आदर्श कृषक श्री बलवन्त सिंह ने जिस मेहनत लग्न और सतत प्रयत्नों से अपने फार्म को संवारा, निखारा है, वह विश्व के और किसी भारतीय किसान के लिए अनुकरणीय है———इनके फार्म को देखकर किसी भी व्यक्ति का मन खेती करने की उमंग से भर सकता है ।

कृषि पंडित बलवन्त सिंह की पौधशाला से राजस्थान के विभिन्न भागों के अतिरिक्त पंजाब के बागवानी विभाग की मार्फत लगभग 60 हजार किन्नू के पौधे पंजाब के किसानों को दिए गए हैं । मुख्यमंत्री सरदार प्रकाशसिंह बादल के उद्यान तथा हरियाणा के मुख्यमंत्री चौधरी देवीलाल के उद्यान के लिए भी पौधे भेजे गए हैं । ऐसा विश्वास है कि किन्नू के गुणों और स्वादिष्ट होने के कारण शीघ्र ही यह नागपुर संतरे का स्थान ले लेगा, जिससे किसानों को भी पर्याप्त आर्थिक लाभ होगा । ●

सोने की चिड़िया

विभा त्यागी

भारत प्यारा देश कभी जो,
सोने की चिड़िया कहलाया,
फंसा दासता के कुचक्र में
उस पर ऐसा वक्त भी आया।

गौरव था जो सारे जग का,
उस पर शाप पड़ा था भारी,
चेतन जड़ था जड़ चेतन था,
छल जागा जड़ थे नर-नारी ।

जहर गुलामी का फैला था,
अंग्रेजों के दंश थे पैने
मर्म वेदना से दिल जड़ थे
मुख सब बन्द किये थे भय ने ।

लेकिन यह सब कब तक होता
दुख का लावा आखिर पिघला,
आजादी का नन्हा शरारा
दिलों में ज्वाला बन कर मचला।

आते-आते वह दिन आया,
जनता ने अपने हाथों से
संविधान भारत का लिखा
हर्ष भरे स्वर में सब बोले,

'जनता से, जनता की खातिर,
जनता की सरकार बनेगी ।
भाग्य विधाता अपने हम हैं
अब न कोई भी कमी रहेगी ।'

लेकिन यह सब तो कथनी ही थी,
अब तक करनी बनी नहीं है।
मोहक आशाओं पर कितनी
धूल अभी तक जमी हुई है ।

एक जमाना गुजर गया है,
हम जब से आजाद हुए हैं,
लेकिन अब भी यूं लगता है,
अन्ध कूप में पड़े हुए हैं । ●

संस्थागत क्षेत्र के जरिए कृषि ऋण का वितरण

आज भारत वर्ष के लगभग सभी राज्यों के कृषक उन्नत किस्मों के बीज, खाद, कृषि औजार, सिंचाई आदि की सुविधा का लाभ उठाकर एवं तकनीकी ज्ञान की जानकारी रखकर कृषि उत्पादन वृद्धि करने में संलग्न है। परिणामस्वरूप देश में विभिन्न परिस्थितियों (प्राकृतिक विपदाओं) के बावजूद समस्या का समाधान नहीं के बराबर है। पिछले दो वर्षों से खासा अनाज पैदा हो रहा है। खाद्यान्न उत्पादन में प्रतिवर्ष निरंतर वृद्धि हो रही है। आने वाले वर्षों में कुल कृषि योग्य भूमि की अधिक मात्रा सिंचित क्षेत्र में आने, कृषकों म दो फसल लेने की प्रवृति, रासायनिक खाद का अधिक उपयोग, आवश्यकतानुसार कृषि साख की पूर्ति, विपणन की उचित व्यवस्था, विभिन्न फसलों के लिए शासन द्वारा न्यूनतम कीमत का निर्धारण व विभिन्न संस्थाओं द्वारा उपलब्ध कराए जा रहे तकनीकी ज्ञान से निकट भविष्य में उत्पादन में और भी वृद्धि की संभावना है। खासकर उपरोक्त सुविधाओं के साथ ही जब वर्तमान केन्द्रीय सरकार ग्रामीण व कृषि विकास के ऊपर कुल योजना व्यय का 40 भाग निश्चित करने जा रही है, तो कृषि उत्पादन में वृद्धि का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है

कृषि उत्पादन में कृषि साख का समय पर व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होना कृषक के लिए महत्वपूर्ण है। वर्तमान समय में कृषकों को कृषि साख की सुविधा निम्न दो क्षेत्रों द्वारा प्राप्त होती है।

1. असंस्थागत क्षेत्र के माध्यम से।
2. संस्थागत क्षेत्र के माध्यम से।

असंस्थागत क्षेत्र के अन्तर्गत ग्राम के पेशेवर महाजन व कृषक, बड़े कृषक, ग्रामीण व्यापारी, कृषक के नजदीकी संबंधी, दलाल, एवं मित्र कृषकों के ऋण के एक भाग की पूर्ति करते हैं जबकि संस्थागत क्षेत्र के अन्तर्गत:—1. सहकारी क्षेत्र (सहकारी अधिकोष एवं समितियां) 2. व्यापारिक अधिकोष (बैंक) 3. क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, प्रमुख रूप से आते हैं।

सहकारी क्षेत्र के अन्तर्गत सहकारी साख का त्रिस्तरीय ढांचा है, जिसके अन्तर्गत राज्य स्तर पर प्रत्येक राज्य में राज्य सहकारी बैंक (शीर्ष बैंक) है जिनकी जून, 1978 में कुल संख्या 26 थी। द्वितीय स्तर अथवा जिला स्तर पर 344 जिला केन्द्रीय बैंक कार्यरत हैं, इन बैंकों की जून 76 से कुल 5,477 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत थीं। आधार स्तर (ग्रामीण स्तर) पर जून 76 को 1,34,838 प्राथमिक कृषि साख समितियां कार्यरत थीं। पुनर्गठन के पश्चात् इन समितियों की संख्या लगभग एक लाख के करीब होगी।

व्यावसायिक बैंकों ने राष्ट्रीय उद्देश्य की पूर्ति के लिए राष्ट्रीयकरण के पश्चात् कृषि क्षेत्र में कार्य करना प्रारम्भ किया और इसके लिए वर्ष 69 के पश्चात् सितम्बर 78 तक 9,500 शाखाएं ग्रामीण क्षेत्रों में खोली हैं (जो कि कुल शाखा का 38.4% है) ताकि जहां एक ओर ग्रामीणों को कृषि साख आसानी से उपलब्ध कराई जा सके वहां दूसरी ओर कुल कृषि क्षेत्र की साख की मांग को संस्थागत रूप अधिक दिया जा सके। ग्रामीण क्षेत्रों में इन ग्रामीण शाखाओं के अतिरिक्त भारतीय स्टेट बैंक ने विशेष रूप से कृषि विकास शाखाएं खोली हैं, जिनका मुख्य कार्य क्षेत्र के कृषकों की कृषि आवश्यकता का आंकलन, अल्पकालीन, मध्यमकालीन, दीर्घकालीन साख, एवं उपभोग साख की पूर्ति करना है।

संस्थागत क्षेत्र के जरिए से ग्रामीण क्षेत्र में अधिक साख उपलब्ध कराने हेतु एवं उपेक्षित ग्रामीण छोटे व्यापारियों के ऋण की व्यवस्था हेतु 2 अक्तूबर, 1975 को देश में पांच क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक खोले गए थे। दिसम्बर, 1978 को इन बैंकों की संख्या बढ़कर 50 हो गई है। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, जो देश के 16 राज्यों में कार्यरत हैं, तेजी के साथ ग्रामीण क्षेत्रों में अपनी शाखाओं का विस्तार करते जा रहे हैं।

इस प्रकार उपरोक्त संस्थागत क्षेत्र के अन्तर्गत आने वाली संस्थाओं के द्वारा कृषकों को कृषि साख की सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है। व्यावसायिक बैंकों के कृषि ऋण क्षेत्रों में प्रवेश के समय यह आशा की गई थी कि संस्थागत क्षेत्र के जरिए से अधिक ऋण सुविधा उपलब्ध होगी। तुलनात्मक दृष्टि से इस हेतु जितना प्रचार-प्रसार हुआ उस अनुपात में ऋण देने का कार्य नहीं हुआ। कृषि के क्षेत्र में व्यावसायिक बैंकों का योगदान जून 1969 में 5% था जो कि जून 1977 में बढ़कर मात्र 10% हुआ। व्यावसायिक बैंकों की कृषि साख क्षेत्र में धीमी प्रगति, लघुकृषक, सीमांत कृषक एवं कृषक मजदूरों एवं ग्रामीण दस्तकारों को जो ऋण सुविधाएं मिलने की आशा की गई थी, पूर्ण न होने पर ग्रामीण वातावरण में "ग्रामीणों के लिए" क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक की स्थापना की गई। क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक ने अल्पावधि में लघु कृषकों, सीमांत कृषकों, कृषक मजदूरों ग्रामीण दस्तकारों एवं ग्रामीण छोटे व्यापारियों को उनके दरवाजे पर ऋण देने में उल्लेखनीय कार्य किया है। इतना ही नहीं, बल्कि स्थानीय बचत को आकर्षित कर उसका उसी स्थान में विनियोग भी किया है। उदाहरण स्वरूप जून 77 तक ग्रामीण बैंकों द्वारा वितरित कुल 18.68 करोड़ रुपये के ऋण में से लघु कृषक, सीमांत कृषक, खेतिहर मजदूर, ग्रामीण दस्तकारी एवं छोटे व्यापारियों को 17.61 करोड़ रुपये का ऋण दिया है, जो कि लगभग कुल का 90% भाग होता है।

संस्थागत क्षेत्र में तीन मुख्य अभिकरणों के कार्यरत रहते हुए भी यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि साख की पूर्ति में असंस्थागत क्षेत्र के जरिए अभी भी कुल मांग का 65% भाग दिया जाता है। असंस्थागत क्षेत्र के जरिए कृषि साख पूर्ति में कमी अवश्य हुई है, उदाहरणार्थ जहां वर्ष 1951–52 में 85% 1961–62 में 75% एवं वर्तमान में लगभग 65% रह गई है।

उपरोक्त तथ्य से स्पष्ट है कि संस्थागत क्षेत्र के जरिए जिसके अन्तर्गत (1) सहकारी क्षेत्र, (2) व्यावसायिक बैंक, (3) क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक आते हैं कुल कृषि ऋण मांग की 35% आवश्यकताओं की पूर्ति की जाती है। कृषकों के कुल कृषि ऋण की 35% आवश्यकताओं की पूर्ति कर कृषि उत्पादन की वृद्धि में कृषकों से ज्यादा अपेक्षा सही प्रतीत नहीं होगी। संस्थागत क्षेत्र के जरिए अधिक साख देने हेतु आधार स्तर (ग्रामीण स्तर) पर जो प्राथमिक कृषि साख संस्थाएं कार्यरत हैं, उनपर हमें शीघ्र ध्यान देना होगा। प्रारंभ से ही एवं जून 1977 में क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों के कार्य की समीक्षा हेतु प्रो० एम० एल० दांतवाला की अध्यक्षता में रिजर्व बैंक आफ इण्डिया द्वारा गठित समिति ने भी आधार स्तर पर किसी प्रकार के परिवर्तन की सिफारिश नहीं की है एवं वर्तमान पुनर्गठित प्राथमिक साख संस्थाओं को उपयुक्त अभिकरण (ऐजेन्सी) माना है। कृषकों को कृषि हेतु अधिक साख कृषि उपज का विपणन, उपभोक्ता सामग्री का वितरण, उपभोग ऋण का वितरण, एवं तकनीकी ज्ञान एक स्थान पर ही यदि हम उपलब्ध कराना चाहते हैं, तो प्राथमिक कृषि साख संस्थाओं को उस हद तक सक्षम बनाना होगा।

प्राथमिक साख संस्थाओं के कार्यों को हम मुख्यतः चार भागों में बांटकर देख सकते हैं।

1. प्राथमिक कार्य
2. विकासात्मक कार्य
3. अभिकर्ता संबंधी कार्य एवं
4. उत्थान (प्रोमोशनल) संबंधी कार्य।

(1) **प्राथमिक कार्य** :—प्राथमिक कार्य के अन्तर्गत समिति से यह अपेक्षा की जाती है कि वह सदस्यों को अल्पकालीन, मध्यकालीन कृषि ऋण एवं उपभोग ऋण का वितरण, कृषि एवं अन्य उत्पादन व उपभोग की आवश्यकताओं की पूर्ति, दिए गए ऋण के उपयोगीकरण की जाँच, ऋण की वसूली एवं सदस्यता वृद्धि, व अंशपूर्ति एवं अमानत जमा करने का कार्य करेगी।

(2) **विकासात्मक कार्य** : विकासात्मक कार्य के अन्तर्गत सदस्यों का उत्पादन कार्यक्रम तैयार करना, कृषि विभाग की सहायता से तकनीकी जानकारी उपलब्ध कराना, सिंचाई के सुविधा के विस्तार की योजना बनाना एवं स्थानीय उद्योग को बढ़ावा देना व उसी प्रकार के अन्य कार्यों को सम्मिलित कर सकते हैं।

अभिकर्ता संबंधी कार्य के अंतर्गत समिति से स्थानीय विपणन समिति, राज्य सहकारी विपणन संघ, राज्य उपभोक्ता सहकारी भंडार, भारतीय खाद्य निगम, राज्य वस्तु व्यापार निगम एवं इसी प्रकार के अन्य अशासकीय व शासकीय अभिकरणों (ऐजन्सी) के अभिकर्ता के रूप में कार्य करने की अपेक्षा की जाती है।

अन्तिम लेकिन महत्वपूर्ण कार्य, जो कि सदस्यों के उत्थान से संबंधित हैं, के अन्तर्गत समिति रोजगार के अतिरिक्त अवसरों की उपलब्धि में सहायक होगी। राष्ट्रीय बचत योजना का प्रचार, सदस्यों को सहकारिता समिति के क्रियाकलापों संबंधी शिक्षा देना, स्वास्थ्य व मनोरंजन से संबंधित कार्य भी अपने हाथों में ले सकती हैं।

आधार स्तर पर गठित प्राथमिक साख समिति की उपविधियों में वर्णित उपरोक्त कार्यों को देख कर यह आसानी से कहा जा सकता है, कि समिति "सदस्यों का सम्पूर्ण विकास" करना चाहती है। लेकिन सदस्यों से सम्पूर्ण विकास करने में देश की अधिकांश समितियां अभी भी असफल रहीं हैं। रिजर्व बैंक आफ इण्डिया द्वारा गठित अखिल भारतीय ग्रामीण साख समीक्षक समिति ने वर्ष 1969 के अपने प्रतिवेदन में ग्राम्य से लेकर राज्य स्तर की सहकारी साख समितियों की **इकाइयों में सबसे कमजोर कड़ी आधार स्तर पर कार्य कर रही, प्राथमिक साखा समिति को माना** एवं **उसको सक्षम बनाने के लिए अपने सुझाव दिए।**

आधार स्तर पर कार्यरत प्राथमिक साख समितियों को मजबूत बनाए बिना हम संस्थागत क्षेत्र के माध्यम से अधिक साख वितरण की योजना नहीं बना सकते। इस हेतु सहकारी बैंकों, व्यावसायिक बैंकों, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों, इन तीनों को आपस में समन्वय कर कार्य करना होगा, ताकि तीनों विभिन्न संस्थाओं के पास उपलब्ध साधनों का उचित तरीकों से उपयोग हो सके। प्राथमिक साख संस्थाओं को वर्तमान में जिन मुख्य कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है उसे दूर करना आवश्यक है। इन संस्थाओं की प्रमुख कठिनाइयों को निम्न प्रकार रखा जा सकता है।

1. वित्तीय साधनों की कमी।
2. पूर्ण समय के लिये योग्य एवं प्रशिक्षित कर्मचारियों का न होना।
3. सदस्यों का अशिक्षित होना, एवं समिति के कार्यों के प्रति उदासीन होना।
4. पर्यवेक्षण व्यवस्था का अभाव।
5. समिति द्वारा क्षेत्र की जनता का विश्वास अर्जित न कर पाना।

उपरोक्त कठिनाइयों को तीनों वित्तीय संस्थाएं यदि चाहें तो काफी हद तक दूर कर सकती हैं। इसके लिये प्रयास यह किया जाए कि जितनी भी वित्तीय सहायता उपलब्ध हो उसे मात्र प्राथमिक साख समितियों के माध्यम से ही उपलब्ध किया जाए। यदि संस्थागत क्षेत्र के द्वारा ज्यादा अंशों में कृषि साख की सुविधा देना चाहते हैं, तो वर्तमान में व्यावसायिक बैंकों एवं क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा कृषकों को प्रत्यक्ष रूप से बिना प्राथमिक समिति का सदस्य बने जो वर्तमान समय में ऋण वितरित किया जाता है उसे बंद कर देना चाहिए। इससे गांवों के सभी कृषक सहकारी समिति के सदस्य बन सकते हैं। समिति का व्यवसाय बढ़ेगा और समिति विपणन उपभोक्ता व अन्य विविध कार्यों को अपने हाथों में ले सकेगी। **ग्राम्य स्तर पर जब प्राथमिक साखा संस्था एक मुख्य संस्था होगी और ग्रामीणों के दैनिक जीवन**

से संबधित सभी आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी, तो गांवों के लोगों को इधर-उधर भटकने की आवश्यकता नहीं होगी।

तीनों वित्तीय संस्थाओं के साधन एकत्रित कर उन्हें समिति के माध्यम से वितरित किया जाएगा तो कृषकों की आज जो आम शिकायत है कि पर्याप्त ऋण राशि व समय पर ऋण प्राप्त नहीं होता, समाप्त हो सकती है। इसके साथ ही ऋण के उपयोगीकरण की जांच करना भी सरल होगा। वर्तमान समय में जो तीनों संस्थाएं अपनी अलग-अलग शक्ति ऋण वितरण, ऋण वसूली, पर्यवेक्षण आदि में आवश्यक रूप से लगाती हैं उसमें कमी होगी जिसका उपयोग कृषकों के हित में किया जा सकता है। समिति आर्थिक दृष्टि से सक्षम होने पर अच्छे वेतनमान पर योग्य एवं प्रशिक्षित कर्मचारी रख सकती है। इसी प्रकार समिति के व्यवसाय में वृद्धि होने पर सदस्यों को कृषि, सहकारिता व अन्य विविध क्रिया कलापों की जानकारी देने हेतु समिति तकनीकी कर्मचारियों के एक दल को भी नियुक्त कर सकती है। **क्रियात्मक शिक्षा के परिणाम स्वरूप सदस्यों में समिति के प्रति लगाव व दिलचस्पी बढ़ेगी।**

अतएव आज आवश्यकता इस बात की है कि कृषि के क्षेत्र में कार्य कर रही सभी विभिन्न संस्थाएं प्रतिस्पर्धा, एवं अलग-अलग इकाई के रूप में कार्य करने की भावना को त्याग कर केवल कृषकों के संपूर्ण विकास की भावना को लेकर आगे आएं।' ●

बाल-जीवन पर अभिभावकों के आचरण का प्रभाव

महाराज

यह एक तथ्य है कि बालकों के समुचित विकास पर ही परिवार, समाज, राष्ट्र और विश्व का विकास तथा कल्याण निहित है। बालकों की इस अपरिमित महत्ता को ध्यान में रखकर ही इस वर्ष विश्व में 'अंतर्राष्ट्रीय बाल वर्ष' मनाया जा रहा है तथा बालकों के विकास और कल्याण की अनेक योजनाएं चालू की गई हैं या की जा रही हैं। हमारी सरकार भी इस दिशा में प्रयत्नशील है, किन्तु बाल विकास तथा बाल कल्याण केवल सरकारी प्रयत्नों—स्कूली शिक्षादि से सम्भव नहीं है, इसके लिए बालकों के अभिभावकों को भी प्रयत्न करने तथा जागरूक रहने की आवश्यकता है, क्योंकि बालकों के विकास तथा चरित्र निर्माण की बुनियाद उनके अभिभावकों द्वारा ही सम्पन्न होती है। मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि बालकों के आचरण में दोष माता-पिता के आचरण से तथा उनकी पालन-पोषण संबंधी गलतियों से आते हैं। आज संसार में जो धूर्तता, ठगी, बदनीती आदि का बोलबाला है, उसके पीछे मुख्य रूप से अभिभावकों की चरित्रहीनता तथा उनकी पालन-पोषण सम्बन्धी भूलें हैं।

बच्चा गीली मिट्टी के सदृश होता है, उसे किसी भी सांचे में ढाला जा सकता है। जिस प्रकार एक ही मिट्टी से घड़ा, मटकी, सुराही, आदि भिन्न-भिन्न प्रकार के बर्तन बनाए जा सकते हैं उसी प्रकार बच्चे को चाहे जिस सांचे में ढाला जा सकता है। आवश्यकता केवल इस बात की है कि आप उसे कैसा बनाना चाहते हैं, जन्म से ही उसे वैसे सांचे में ढालें। बहुत से लोग प्रारंभिक शिक्षा अवस्था में तो बच्चों पर ध्यान नहीं देते, किन्तु किशोर या युवा अवस्था में उसे सुधारना चाहते हैं; जबकि उस समय बात हाथ से बाहर हो जाती है। हम पौधों को झुका सकते हैं, वृक्ष को नहीं, पौधों को जिस ओर झुका देंगे वृक्ष उसी ओर झुका हुआ बढ़ेगा।

प्रख्यात मनोवैज्ञानिक एडलर का कहना है कि पूरे जीवन का ढांचा शैशव में ही बन जाता है। सोवियत शिक्षा शास्त्री क्रास्नोगोस्कीया के अनुसार ठीक तीन से सात वर्ष की आयु में ही बालक के सर्वांगीण विकास की यथार्थ रूप से नींव पड़ती है। फ्रायड का कथन है कि बालक अपने भावी जीवन में जो कुछ बनना चाहता है, प्रथम पांच-छः वर्षों में ही बन जाता है। तात्पर्य यह है कि जीवन-निर्माण की अवस्था, शिशु-अवस्था है। आप अपने बच्चे के जीवन को जो रूप देना चाहें, इसी अवस्था में दे दें। इसके बाद यह कार्य आपके सामर्थ्य से बाहर हो जाएगा।

बालक के जीवन को ढालने के लिए सांचे को कहीं ढूंढने नहीं जाना है। आप स्वयं सांचा है। आप जैसे होंगे वैसा ही आपका बालक बनेगा। शराबी माता-पिता का बालक शराबी, चोर का बालक चोर, कंजूस का बालक कंजूस, उनके लाख न चाहने पर भी बनेगा। बालक में अनुकरण करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है; वह अनुकरण करेगा ही, उसे अनुकरण करने से रोका नहीं जा सकता। अतः बालक को जैसा बनाना है आपको वैसा स्वयं बनना होगा। बालक के चरित्र निर्माण की प्रथम तथा मुख्य शर्त है—माता-पिता का सच्चरित्र होना।

बालक मां के उदर से कुछ सीखकर नहीं आता। वह सब कुछ यहीं, उन लोगों से सीखता है जिन लोगों के बीच में वह रहता है। अतः जिन बच्चों के माता-पिता बच्चों के सामने लड़ते-झगड़ते हैं, गाली-गलौच करते हैं, झूठ बोलते हैं, चोरी ठगी-बईमानी करते हैं, जुआ खेलते है, मद्यपान तथा धूम्रपान करते हैं, उन बच्चों में ये दुर्गुण अनायास आ जाते हैं। अस्तु आप अपने बच्चों को जिन दुर्गुणों से बचाना चाहते हैं उनसे आपको स्वयं बचना होगा। यदि आपके चरित्र में कोई कमी है, और उस कमी को दूर करने में आप असमर्थ हैं तो कम से कम उस कमी को बच्चों के सामने न आने दें।

बहुत से लोग स्वयं तो गलत चलते हैं किन्तु बच्चों को सही चलने की शिक्षा देते हैं, और जब बच्चे उनके कहे अनुसार नहीं चलते तो वे उनसे खीझते या अप्रसन्न होते हैं। वे इस मनोवैज्ञानिक तथ्य को नहीं जानते कि बालक उपदेश से नहीं, आचरण से प्रभावित होते हैं।

अबोध अवस्था में भी सजगता की आवश्यकता

बालक में जन्म से ही अनुकरण करने तथा सीखने की स्वाभाविक शक्ति होती है। जब हम उसे अबोध समझते हैं तब भी वह अनुकरण करता तथा सीखता है। माता-पिता की प्रत्येक क्रिया से (प्रत्यक्ष या परोक्ष में) प्रभावित होता है। अतः माता-पिता को चाहिए कि वे ऐसा कोई भी कार्य, जो अनुकरणीय न हो, जिसे वे दूसरे लोगों के सामने न कर सकते हों, उसे अबोध शिशु के सामने भी न करें।

अनेक बार बालकों के मन पर बचपन की कुछ विशेष स्मृतियों की अमिट छाप पड़ जाती है। हमें यह ध्यान रखना चाहिए कि उनके मन पर किसी बुरी स्मृति की छाप न पड़े।

बातों तथा कहानियों का भी बाल-मन पर अमिट प्रभाव पड़ता है। हौआ है, भूत है, बिल्ली आ जाएगी, सिपाही पकड़ लेगा, आदि बातें कहने से तथा भूत-प्रेत-परियों आदि की कहानियां सुनाने से बच्चे भीरू बन जाते हैं। उनके कुछ पूछने पर या अन्य बात पर उन्हें डांटने-डपटने से तथा निषेधात्मक आदेश देने से उनके सीखने की जिज्ञासा भंग हो जाती है, तथा वे दब्बू बन जाते हैं। इसके विपरीत साहस, निर्भयता, उत्साह, सेवाभावादि की प्रेरणा देने वाली बातों तथा कहानियों के कहने से वे साहसी, निडर, आदि बन जाते हैं। उनकी जिज्ञासाओं का उचित समाधान होने से उनकी सीखने की शक्ति तथा बुद्धि प्रखर हो जाती है।

बहुत से माता-पिता एक ओर तो यह चाहते हैं कि उनके बच्चे झूठ न बोलें, दूसरी ओर वे स्वयं बच्चों के सामने झूठ बोलते हैं। तकाजे वालों के आने पर घर में बैठकर बच्चों से यह कहलवा देना कि 'पिताजी घर पर नहीं हैं' बच्चों के पैसे मांगने पर यह कह देना कि 'पैसे नहीं हैं' तथा अन्य कार्य के लिए उन्हीं के सामने पैसे निकालना, बच्चों से झूठ बोलकर सिनेमा देखने जाना, आदि बातें ऐसी हैं जो कि बच्चों के लिए झूठ बोलना स्वाभाविक तथा सहज बनाती हैं। यदि आप चाहते हैं कि आपका बच्चा सत्यवादी बने तो इसके लिए आपको स्वयं सत्यवादी बनना होगा। साथ ही यदि आपका बच्चा कभी झूठ बोले तो उसे ऐसा न करने के लिए समझाना-बुझाना भी होगा।

यदि आप चाहते हैं कि आपका बच्चा चोरी आदि दुष्कर्म न करे तो नीचे लिखी कहानी से शिक्षा ग्रहण कीजिए।

एक चोर को अदालत ने खुले आम राजमार्ग पर फांसी लगाने की सजा दी। चोर ने अदालत से प्रार्थना की कि फांसी देने से पहले उसे अपनी मां से मिलने दिया जाए। अदालत ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली।

उसकी मां को बुलाया गया। मां रोती हुई आई और उससे लिपट कर रोने लगी। मां जैसे ही लिपटी, उसने उसके नाक-कान काट लिए।

लोगों ने उसे धिक्कारा, "पापी! मरते समय पाप तो न कर। जिस माता ने जन्म दिया है, पाला-पोषा है, उसी के साथ ऐसा व्यवहार!

"यह मेरी मां नहीं, वैरिन है," उसने कहा, "इसने ही मुझे फांसी के तख्ते तक पहुंचाया है। बचपन में मैं देखा करता था कि यह अड़ौस-पड़ौस के लोगों की चीजें चुरा लाती थी। ... एक बार मैं स्कूल से एक लड़के की कलम चुरा लाया, इस पर इसने मेरी पीठ ठोंकी। जब भी मैं कोई चीज चुराकर लाता, यह प्रसन्नता प्रकट करती। धीरे-धीरे मेरी चोरी करने की आदत पक्की होती गई और मैं इस हद तक बढ़ गया कि आज मुझे फांसी लग रही है। जब मैं पहली बार कलम चुराकर लाया था, यदि तभी इसने ताड़ना कर दी होती तो आज मुझे यह दिन न देखना पड़ता।"

आगे उसने गम्भीर शब्दों में कहा, "मनुष्य अपराधी नहीं होता, उसे अपराधी बनाया जाता है। बचपन में उसे जिस सांचे में ढाला जाता है, वह उसी सांचे में ढल जाता है। यदि माता-पिता सच्चरित्र हों तथा अपने बच्चों के चरित्र निर्माण के प्रति जागरूक हों तो बच्चे दुश्चरित्र कभी नहीं बन सकते।" ●

बझेरा पो० सिमिरिया,
बाया-मोंठ, झांसी (उ० प्र०)

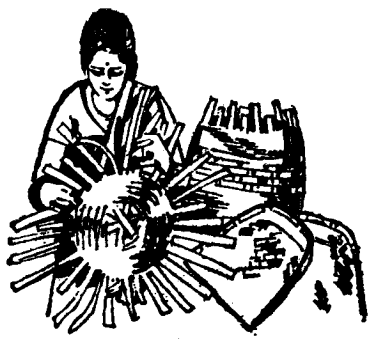

विकासात्मक सहकारी शिक्षा

प्रो० एम० एस० परिहार

भारतीय सहकारिता आन्दोलन का आरम्भ हुए 74 वर्ष हो चुके हैं, फिर भी यह आन्दोलन आत्मनिर्भर नहीं हो पाया है। आज भी सहकारी संस्थाएं सरकारी बैशाखियों की सहायता से घिसट-घिसट कर चल रही हैं। सहकारी आन्दोलन साख आन्दोलन के रूप में ही प्रारम्भ हुआ पर आज अन्य प्रक्रियाओं का भी काफी विस्तार हो चुका है। भारत में सहकारी आन्दोलन पूर्णरूपेण असफल रहा है यद्यपि इसका सफल होना आवश्यक है। वर्तमान में देश म सहकारिता के सिवाय अन्य कोई दूसरा विकल्प नहीं है जिससे उत्पादक और उपभोक्ता वर्ग की समस्याओं का साथ ही साथ निदान हो सके। देश मे यथोचित मात्रा में उत्पादन होना ही पर्याप्त नहीं है वरन उत्पादित वस्तुओं का न्यायोचित वितरण भी आवश्यक है। ये कार्य सहकारी संस्थाएं ही आसानी से कर सकती है बशर्ते कि उन्हे एक सक्षम आर्थिक इकाई के रूप में विकसित किया जाए। सहकारी संस्थाओं को सरकारी संस्थाओं की भांति कार्य करने से रोका जाए। जनता के मन में सहकारिता की अच्छाइयों से संबंधित धारणाओं को इतना दृढ़ किया जाए जिससे वे सहकारी संस्थाओं को अपनी संस्था ही समझें, उसको कार्य प्रणाली में रुचि लेकर सक्रिय सहयोग प्रदान करें क्योंकि सहकारिता आन्दोलन मात्र आर्थिक आन्दोलन ही नहीं है वरन यह सामाजिक और नैतिक आन्दोलन भी है। सहकारिता जीवन का एक दर्शन है। इसके सिद्धान्तों को व्यवहार में प्रयुक्त करके जीवन को सुखी व संतुष्ट बनाया जा सकता है। सहकारिताएं पूंजीवाद एवं समाजवाद का एक सबल विकल्प बनकर देश के तीव्र आर्थिक विकास में योगदान कर सकती हैं। बिना सहकारिता के देश का उद्धार नहीं हो सकता है। सहकारिता महज रजिस्टर एवं प्रवेश शुल्क का ही विषय नहीं है वरन् इस भावना का उद्भव लोगों के हृदय में ही होना चाहिए तभी सहकारिता आन्दोलन आत्मनिर्भर हो सकता है।

भारतीय सहकारिता आन्दोलन की असफलता का एक महत्वपूर्ण कारण देश में विकासात्मक सहकारी शिक्षा का अभाव है। यद्यपि सहकारी शिक्षा के प्रसार हेतु महत्वपूर्ण सुझाव काफी लम्बे समय से विभिन्न समितियों और अर्थशास्त्रियों द्वारा दिए जाते रहे हैं परन्तु सहकारी शिक्षा की योजना का सही क्रियान्वयन देश में अभी तक नहीं हो पाया है। देश में परिवर्तित आर्थिक, राजनैतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों के सन्दर्भ में आज विकासात्मक सहकारी शिक्षा के सम्बन्ध में नये ढंग से विचार करना आवश्यक है। देश में अभी तक सहकारी शिक्षा की जिम्मेदारी राष्ट्रीय, राजकीय और जिला सहकारी संघों पर ही है। इसने पत्र-पत्रिकाओं के माध्यम से सहकारिता का प्रचार करने के सिवाय और कोई भी महत्वपूर्ण शैक्षणिक कार्य सम्पादित नहीं किया है। देश में जहां मात्र 33 प्रतिशत व्यक्ति ही शिक्षित हैं, सहकारी संघों के प्रयास कितने सफल हैं, इससे ही स्पष्ट हो जाता है। देश की 67 प्रतिशत अशिक्षित जनता में सहयोग लेने की दिशा में कोई भी उल्लेखनीय प्रयास नहीं किए गए हैं। सहकारिता के विकास में बहुसंख्यक अशिक्षित वर्ग का भी सहयोग लिया जा सके ऐसे शैक्षणिक कार्यक्रमों के बनाने और कार्यान्वित करने की आज नितान्त आवश्यकता है। विदेशों में विकासात्मक सहकारी शिक्षा की दिशा में शिक्षित लोगों की संख्या की अधिकता की वजह से बहुत कुछ किया जा चुका है। इसीलिए इंग्लैंड, जर्मनी, डेनमार्क, जापान आदि देशों में सहकारिता आन्दोलन काफी सफल रहा है। वहां का प्रत्येक नागरिक सहकारिता के सिद्धान्त और व्यावहारिक पक्षों से पूर्ण परिचित है, वहां सहकारिता जीने का एक नया ढंग हो गया है। इससे वहां आर्थिक पुनरुत्थान में भी काफी सहयोग मिला है। इन देशों में सशक्त आधार पर सहकारी क्षेत्र का विकास हो चुका है। वहां की सहकारी संस्थाएं बड़े-बड़े पूंजीवादी व्यावसायिक संगठनों की प्रतियोगिता से न केवल अपनी रक्षा ही कर रही हैं वरन् आर्थिक क्षेत्रों में उन्हें पराजित भी कर रही हैं। इसका प्रभाव वहां के राजनैतिक एवं सामाजिक जीवन पर भी पड़ रहा है। ये राष्ट्र सम्पूर्ण सहकारी समाज के लक्षण के काफी निकट हो गए हैं। हम अभी तक सहकारिता की असफलताओं की कहानी के विश्लेषण करने में ही अपना समय नष्ट कर रहे हैं।

अभी तक सहकारी शिक्षा की दिशा में सहकारी संघों द्वारा जो प्रयास किए गए हैं, वे ऊपरी स्तर से ही आरम्भ किए गए थे जो कि मूलतः गलत साबित हुए हैं। विकासात्मक सहकारी शिक्षा की दिशा में आज निचले स्तर के प्रयास प्रारम्भ किए जाने की आवश्यकता है। हमें प्राथमिक समिति गत स्तर से प्रयास प्रारम्भ करके जिला राजकीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर ले जाने की आवश्यकता है। हमारा देश गांवों का देश है। इसकी 75 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में ही निवास करती है व कृषि कार्यों में संलग्न है। इसीलिए ग्रामीण क्षेत्रों में प्रयास आरम्भ करने की जरुरत है। विकासात्मक सहकारी शिक्षा से सम्बन्धित योजना हमें कार्यान्वित करनी है उसमें इस बात का पूरा-पूरा ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि इस कार्यक्रम में देश के 67 प्रतिशत अशिक्षित लोगों को भी सहकारिता के गुणों के प्रति आश्वस्त करना है ताकि उनका सक्रिय सहयोग मिल सके।

विकासात्मक सहकारी शिक्षा के अन्तर्गत न केवल सहकारिता के सैद्धान्तिक पक्षों की जानकारी का यथोचित प्रचार किया जाना जरूरी है वरन् व्यावहारिक पक्षों से भी जन सामान्य को परिचित कराया जाना चाहिए। इस कार्य में जहां तक सम्भव हो, ग्राम पंचायतों, समाज सेवी संस्थाओं, ग्राम सेवकों, सहकारी कृषि विस्तार अधिकारियों, पटवारियों और गांव के पढ़े-लिखे युवकों का पूर्ण सहयोग लिया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में रात्रि काल में हिन्दी व क्षेत्रीय भाषाओं में नाटक मंचन, कवि सम्मेलन, निबन्ध-भाषण व वाद-विवाद प्रतियोगिताओं का ग्रामीण व तहसील स्तर पर आयोजन किया जाए।

सहकारिता की सफलताओं से सम्बन्धित फिल्म प्रदर्शित की जाएं। सम्बन्धित प्रेरणादायक पोस्टरों का निर्माण करके गांवों में लगाया जाए। सहकारी सप्ताह का आयोजन किया जाना चाहिए। ग्रामीण शिक्षित व्यक्तियों को सहकारिता पर अपने विचार प्रकट करने का न केवल अवसर प्रदान किया जाए वरन् विद्यमान सहकारी संस्थाओं की कार्यप्रणाली पर भी विचार प्रकट करने का अवसर दिया जाए। इस भ्रष्ट सहकारी संस्थाओं को न केवल अपनी कार्य प्रणाली सुधारने का ही अवसर मिलेगा वरन् उनकी सार्वजनिक कलई खुलने का भय भी हमेशा बना रहेगा। छोटी-छोटी पुस्तिकाओं को, जिनमें सहकारिता की मोटी जानकारी हो, प्रकाशित और प्रसारित किया जाए। इन पुस्तिकाओं को सार्वजनिक स्थलों पर पठन करने की सुविधाएं दिलाई जाएं। इससे जन सामान्य और सहकारी संस्थाओं के सदस्यों को सहकारिता विषयक ज्ञान वृद्धि में सहायता मिलेगी। सहकारिता एक जन आन्दोलन है। जनता को स्वयं इस आन्दोलन के मूल्यांकन व गलतियों को सुधारने का अवसर दिया जाना चाहिए। जहां टेलीविजन सेवाओं का विस्तार हो चुका है वहां सम्बन्धित कार्यक्रमों को टेलीविजन पर दिखाए जाने की व्यवस्था की जानी चाहिए। रेडियो पर भी सम्बन्धित प्रेरणादायक कार्यक्रम प्रसारित किए जाने चाहिए। इससे विकासात्मक सहकारी शिक्षा प्रदान करने में न केवल सुविधा ही रहेगी वरन् सहकारिता आन्दोलन का प्रचार एवं प्रसार भी एक सशक्त आधार पर होगा।

आज हमारी सहकारी संस्थाएं ऐसे भ्रष्ट व्यक्तियों का अड्डा बनी हुई हैं जिन्हें सहकारिता के सिद्धान्तों का प्रारम्भिक ज्ञान भी नहीं है। ये नेतागण सहकारी संस्थाओं को कामधेनु समझकर अपना पैतृक अधिकार बनाए हुए हैं और साधनों के दुरुपयोग में निरन्तर संलग्न हैं। इनके चुंगुल से सहकारी संस्थाओं को छुटकारा दिलाना आवश्यक हो गया है। विकासात्मक सहकारी शिक्षा की दिशा में यदि निचले ग्रामीण स्तर से प्रभावशाली प्रयास किए जाएं तो हमारा सहकारिता आन्दोलन न केवल आत्मनिर्भर हो सकता है वरन् सही दिशा की ओर अग्रसर भी हो सकता है। सहकारिताओं का विकास निचले व मध्यम श्रेणी के जरूरतमंद लोगों के हित वर्धन हेतु ही किया गया है न कि ग्रामीण पूंजीपतियों द्वारा शोषण हेतु। जब तक निचले निर्धन तबके व मध्यम श्रेणी के लोगों का कल्याण सहकारी संस्थाओं के माध्यम से न हो जाए तब तक हमें लक्ष्य से दूर ही समझना चाहिए। इस शिक्षा में सफलता प्राप्ति हेतु निचले ग्रामीण स्तर से एक प्रभावशाली विकासात्मक सहकारी शिक्षा का कार्यक्रम बनाने और कार्यान्वित करने की आज की परिवर्तित परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में नितान्त आवश्यक है। यही आज समय की पुकार है और वक्त का तकाजा भी है।

प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, अर्थ शास्त्र विभाग,
टी० टा० क० कला एवं वाणिज्य
स्नातकोत्तर महाविद्यालय
पो०—बलौदा, बाजार,
जिला—रायपुर (म० प्र०)

कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिए अनुसंधान

कृषि वैज्ञानिक गेहूं की बाली का परीक्षण करते हुए।

सरकार की कृषि नीति को प्राथमिकता देने की दृष्टि से, कृषि उत्पादन में वृद्धि के लिए आवश्यक सहायता देने हेतु अनुसंधान और विस्तार-शिक्षा को नई दिशा प्रदान की गई। कृषि और सिंचाई मंत्रालय के कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग की 1978-79 की वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार इस अवधि के दौरान अनुसंधान और विस्तार को और सुदृढ़ और विस्तृत आधार देने के कई उपाय किए गए। कृषि विश्वविद्यालयों को, मुख्य खाद्य फसलों में विशिष्ट अनुसंधान के क्षेत्र में अपनी क्षमता बढ़ाने में सहायता देने के लिए 40 करोड़ रु० की एक राष्ट्रीय कृषि अनुसंधान परियोजना तैयार की गई है।

आलोच्य वर्ष के दौरान पिछड़े जनजाति और उपेक्षित क्षेत्रों में कृषि और इससे संबंधित क्षेत्रों को अनुसंधान सहायता देने के लिए अंडमान और निकोबार द्वीपसमूह में एक केन्द्रीय कृषि अनुसंधान संस्थान खोला गया है। इसका मुख्यालय पोर्ट ब्लेयर में है।

यह केन्द्र बागवानी, पौध लगाने, पशु विज्ञान और मत्स्यपालन के क्षेत्र में इस द्वीपसमूह में उपलब्ध विस्तृत क्षमता के विकास की समस्याओं को हल करने के उपाय खोजेगा। उपेक्षित क्षेत्रों की सहायता करने के लिए जनजाति क्षेत्रों में स्थापित चार परियोजनाएं शुरु कर एक दूसरा महत्वपूर्ण कार्य किया गया। ये चार परियोजनाएं हैं : (1) रसत-कुतिबाई श्रीकाकुलम (आंध्र प्रदेश) स्थित गिरिजन कृषि केन्द्र में कुसुम्भ अनुसंधान ; (2) अमरावती जिले में मेलघाट में जनजाति लोगों के आर्थिक विकास के लिए परिचालन अनुसंधान परियोजना (3) मध्य प्रदेश में तीन जनजाति जिलों में प्राकृतिक, भौतिकी, संसाधनों, सामाजिक-आर्थिक नियंत्रणों और फार्म तथा वन्य अध्ययन; (4) और मांडला जिले में जनजाति क्षेत्रों के विकास के लिए परिचालन अनुसंधान परियोजना।

कुछ प्राथमिकता क्षेत्रों में कृषि अनुसंधान को वस्तु समितियों तथा उपकर राशि के शेष धन से सहायता दे कर सुदृढ़ आधार प्रदान किया गया।

यह काम चार क्षेत्रों में हुआ। प्रथम क्षेत्र के अन्तर्गत दलहन और तिलहन के अनुसंधान में तीन-मुखी नीति अपनाई गई। इस नीति के निम्न लिखित अंग हैं : (1) सिंचित क्षेत्र में दलहन और तिलहन की बारी-बारी से फसल उगाना (2) बरसाती इलाकों में, पानी की व्यवस्था में सुधार, पौध संरक्षण, बीज उत्पादन और उपजोत्तर तकनीकों में सुधार द्वारा इनकी उपज में वृद्धि करना और (3) वार्षिक और बारहमासी फसलों के बीच में दलहनों और तिलहनों की भी उपज लेना।

द्वितीय क्षेत्र के अन्तर्गत चीनी कारखानों में पिराई के मौसम की अवधि बढ़ाने के लिए गन्ना, विशेषकर, इसकी जल्दी तैयार होने वाली विभिन्न किस्मों पर परीक्षण और उन्हें लोकप्रिय बनाने के लिए अनुसंधान करना, तथा बारी-बारी से चावल–गन्ना और गेहूं फसल प्राप्त करना है। तृतीय क्षेत्र के अन्तर्गत यूरिया पर लाख का लेप चढ़ाने की प्रक्रिया को बढ़ावा देकर लाख की घरेलू खपत बढ़ाना, जिससे उर्वरक की क्षति कम हो और चौथे क्षेत्र के अन्तर्गत भूमिहीन श्रमिक परिवारों की आय और रोजगार क्षमता बढ़ाने के लिए एक अखिल भारतीय संगठित अनुसंधान कार्यक्रम शुरु करना है।

गेहूं प्रजनन प्रयोगशाला शिमला के प्रयास से ही पहाड़ी क्षेत्रों में रोग निरोधक गेहूं का उत्पादन सम्भव हुआ।

नए कृषि विश्वविद्यालय

इस वर्ष के दौरान, कृषि उत्पादन के लिए आवश्यक सहायता उपलब्ध कराने के लिए पहाड़ी और उपेक्षित क्षेत्रों में नए कृषि विश्वविद्यालय और कालिज खोले गए। इनमें हिमाचल प्रदेश सरकार द्वारा अलग कृषि विश्वविद्यालय की स्थापना शामिल है। इस विश्वविद्यालय का मुख्य परिसर पालमपुर में और दूसरा सोलन में होगा। इसका उद्देश्य राज्य के बड़े कृषि-विज्ञान क्षेत्रों में अनुसंधान केन्द्रों का विकास करना है। इसी प्रकार उत्तर-पूर्वी पर्वत विश्वविद्यालय के अन्तर्गत एक कृषि कालेज नागालैंड में द्यासपानी के निकट स्थापित किया गया। भूमि प्रबंध की प्रणालियों में प्रशिक्षण के लिए पर्याप्त जन-साधन जुटाना है, ताकि उस क्षेत्र के लोगों के लिए "झूम" खेती अनावश्यक हो जाए। जम्मू-कश्मीर सरकार ने भी एक कृषि विश्वविद्यालय खोलने का निर्णय किया गया है।

जनशक्ति का विकास

रिपोर्ट में आगे बताया गया है कि पारिस्थितिक और आर्थिक दृष्टि से कमजोर क्षेत्रों की कृषि-विकास क्षमता बढ़ाने के लिए कृषि अनुसंधान परिषद् एक जनशक्ति विकास कार्यक्रम शुरु कर रही है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य उपेक्षित, पिछड़े हुए, सूखाग्रस्त और बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में अनुसंधान के लिए और लोगों को प्रशिक्षण देना है। क्रमबद्ध ढंग से राष्ट्रीय प्रदर्शन भी आयोजित किए जा रहे हैं।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के संचालक मंडल ने उपेक्षित क्षेत्रों में कृषि विज्ञान केन्द्रों की स्थापना का एक प्रस्ताव बनाया और इसे स्वीकृति दी।

वर्ष 1979 में, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् अपनी स्थापना के 50 वर्ष पूरे करने पर अपनी स्वर्ण जयंती मनाएगी। लघु और सीमांत किसानों को खेती की आधुनिक तकनीकों से परिचित कराने के लिए एक विशाल कार्यक्रम बनाया गया है। विकास के लिए कृषि अनुसंधान पद्धतियों पर एक अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी आयोजित की जाएगी।

ईंधन और खाद की समस्या का हल : गोबर गैस प्लांट

शिवा विद्यार्थी

भारत में 80 करोड़ टन गोबर पैदा होता है और इसका आधा भाग चूल्हों में जला दिया जाता है। यह अनुमान दूसरे पंचवर्षीय योजना काल में योजना आयोग ने लगाया था। इस सारे गोबर को अगर खाद बनाने में लिया जाए तो देश में 40 लाख टन अतिरिक्त अनाज पैदा हो सकता है। इस दृष्टि से राष्ट्रीय विकास में स्वावलम्बी होने के लिए गोबर की खाद का विशेष महत्वपूर्ण स्थान है।

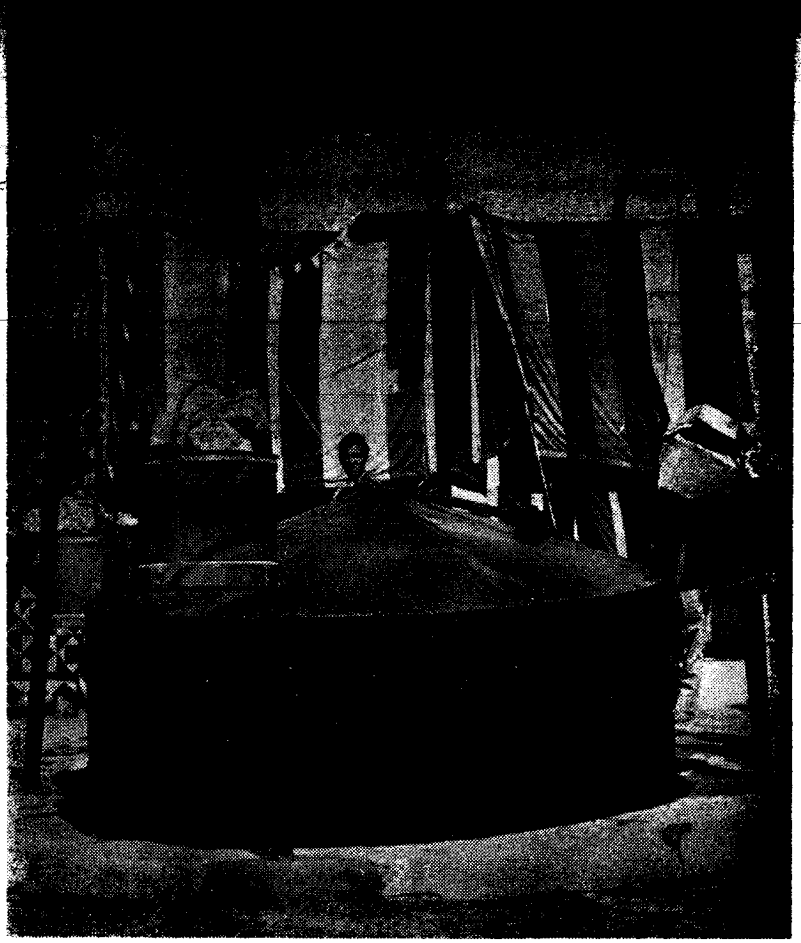

गोबर गैस प्लांट

किसानों की ये दोनों विकट समस्याएं देश के लिए अभिशाप बनी हुई हैं। इसी कारण इस समस्या के समाधान के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली के वैज्ञानिकों ने इस पर शोध कार्य आरम्भ किए। इस समस्या को दूर करने के लिए गोबर गैस प्लांट का आविष्कार किया जिससे खाद एवं गैस, दोनों साथ-साथ प्राप्त किया जाता है। इस आविष्कार से देहात के लिए नए सूर्य का उदय हुआ जिससे दो महान विकट समस्याओं का हल हुआ। कृषि वैज्ञानिकों ने गोबर गस प्लांट का आविष्कार करके इन दो विकट समस्याओं का समाधान राष्ट्र के सम्मुख प्रस्तुत किया है। इस संयंत्र में सड़ने से केवल खाद ही नहीं बल्कि फफूंदी क्रिया द्वारा गस भी प्राप्त होती है जो ईंधन के रूप में काम में लाई जाती है। इसके निकले हुए तलछट के रूप में गोबर की बहुत अच्छी खाद भी होती है। इस खाद का रंग हल्का काला, तरल रूप में गंधरहित और नाइट्रोजन जैविक तत्व वाली होती है। इस तरह से जलने के काम में आने वाले गोबर से उसे प्लांट में डालकर फफूंदी (खमीर) क्रिया द्वारा जलावन गैस प्राप्त करने के अतिरिक्त होती है। दोहरा लाभ उठाया जा सकता है। यदि हमारे देश के सभी देहाती किसान लोग गोबर गैस प्लांट को अपना लें तो ईंधन का प्रश्न हल होने के साथ ही देश में उपलब्ध गोबर की शत-प्रतिशत मात्रा का उपयोग खाद के लिए होने लगेगा जिससे भूमि की उर्वरता का विकास होगा और अन्न का उत्पादन बढ़ेगा जो राष्ट्र को अन्न के क्षेत्र में स्वावलम्बी बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देगा।

(1) इस प्लांट को लगाने से एक पंथ दो काज होते हैं एक तो ईंधन के लिए गैस और खेतों में डालने के लिए खाद।

(2) गोबर के उपलों की आग (ऊर्जा) की बनिस्बत गोबर गैस से प्राप्त किए गए गैस की ऊर्जा 25-30 प्रतिशत अधिक गर्म और विशेष शक्तिवाली होती है।

(3) जहां उपलों की आग 10-12 प्रतिशत ही काम आती है वहीं गैस आवश्यकता से अधिक नष्ट नहीं होने पाती क्योंकि समाप्त होने पर उसे बन्द कर दिया जाता है।

(4) प्लांट से प्राप्त खाद गुण-धर्म में श्रेष्ठ होती है और जितना गोबर डाला जाता है वह उसी मात्रा में उपलब्ध होती है क्योंकि फफूंदी क्रिया में न तो मात्रा ही घटती है और न पौधों के पोषक तत्व ही नष्ट होते हैं किन्तु घूरे की खाद में न तो गुणधर्म ही अच्छे होते है और न हवा पूरे मात्रा में उपलब्ध होती हैं क्योंकि हवा व धूप से खाद के पदार्थ नष्ट हो जाते हैं और धूप से पोषक तत्व प्रायः नष्ट होते रहते हैं।

(5) मिट्टी की जलधारण क्षमता इसके खाद को डालने से बढ़ती है जिसके पोषक तत्वों का उपयोग पौधे सही रूप में कर लेते हैं।

(6) जो 40 करोड़ टन गोबर जलाने म खर्च किया जाता है इस प्लांट द्वारा खाद के रूप में समग्र मात्रा में पौधों को उपलब्ध हो सकेगा। फलतः पौधों की बढ़ोत्तरी अच्छी होगी और उत्पादन बढ़ेगा।

(7) इस गैस के कारण धुआं आदि नहीं होता जिससे कोई दूषित प्रभाव औरतों के स्वास्थ्य पर नहीं पड़ता और न ही उनकी आंखें ही खराब होती हैं। अतः गोबर गैस प्लांट से जन स्वास्थ्य की भी रक्षा होती है।

(8) तलछट के रूप में निकले गोबर में कीटाणुओं के भोजन तत्व नहीं होते, उससे मच्छर मक्खी के उत्पत्ति सूत्र बन्द हो जाते है जिससे रोग फैलने की सम्भावना कम हो जाती है।

फफूंदी क्रिया पर जलवायु का प्रभाव पड़ता है। सर्दी का मौसम इसके लिए हानिकारक होता है। क्योंकि यह क्रिया तापमान गिरने से कम होती है। गर्मी के दिनों में तापमान ऊंचा रहने से फफूंदी क्रिया की गति तेज हो जाने से गैस अधिक मात्रा में बनती है जैसा कि वैज्ञानिकों ने देखा है। इस क्रिया के संचालन के लिए 30 और 35 सेंटीग्रेड का तापमान होना अत्यन्त आवश्यक है। सर्दी के दिनों में गैस बनाने की सम्भावना पर श्री ओ० सी० चावला भू० विज्ञान और कृषि रसायन संस्थान नई दिल्ली ने शोध किया और अपने अनुभव को इण्डियन फार्मिंग नवम्बर, 1973 में इस प्रकार व्यक्त किया। ऐसी परिस्थिति में एक प्रतिशत गेहूं का भूसा या अच्छी बारीक की हुई बाजरे की पत्तियों में एक प्रतिशत यूरिया मिलाकर गोबर के घोल में डालने से सर्दी के दिनों में फफूंदी क्रिया अच्छी होती है। इसके अतिरिक्त, क्लाथ के कवर से ढक कर रखने से प्लांट का तापमान बाहरी तापमान से ऊंचा रहता है जिससे फफूंदी क्रिया सुचारू रूप से होती है। अतः सर्दी के दिनों में इस प्रकार डाइजेस्ट टैंक में गोबर के घोल में गर्मी पैदा करके फफूंदी क्रिया अच्छी तरह की जा सकती है। यह क्रिया पशुओं के मूत्र में बनाने से भी अच्छी होती है।

यह रसोई घर के निकट या आंगन में कहीं भी लगाया जा सकता है। किसी भी प्रकार की दुर्गन्ध न आने के कारण मच्छर मक्खी इससे पैदा नहीं होते और स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव नहीं पड़ता। एक बात पर अवश्य ध्यान देना चाहिए कि कुएं या अन्य ऐसे किसी स्थान पर जहां हमेशा नमी बनी रहती है इसे नहीं लगाना चाहिए क्योंकि ऐसे स्थानों पर नमी के कारण गैस नहीं बन पाती। कुएं के करीब 30-40 कि० मी० दूर होने पर कोई हानि नहीं होती। इस प्लांट को लगाए जाने वाला स्थान खुला हो, इस पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

इसका आकार पशुओं की संख्या और गोबर की मात्रा पर निर्भर करता है। इस प्लांट में गैस जमा करने के लिए लोहे का एक ड्रम और गोबर के घोल का होल (डाइजेस्टर टैंक) दोनों ही साथ होते हैं। एक गोलाकार डाइजेस्टर टैंक जो कुएंनुमा 12 फीट गहरा होता है, बनाया जाता है। सीमेंट कंकरीट अथवा चूने और पत्थर से उसकी दीवारें बनाई जाती हैं। इसमें गोबर का घोल (50 प्रतिशत गोबर एवं 50 प्रतिशत पानी) को फफूंदी क्रिया के लिए सतह पर भरा जाता है। यह आधा भूमि के बाहर आधा भीतर रखा जाता है। भूमि की सतह पर छोटा सा हौज बनाया जाता है जिसे चार्जपिट कहते है? इसमें गोबर घोल कर डाला जाता है। इसका निकास डाइजेस्ट के दूसरी ओर बनाया जाता है जिससे गैस बनाने के पश्चात् तलछट के रूप में गोबर घोल डाइजेस्टर के बाहर आ जाता है।

12 फीट की गहरी टंकी का जिसका साढ़े छः फुट व्यास होता है, चार फुट की गहराई से खोद कर बाहर निकाल दिया जाता है। पुनः व्यास साढ़े छहः फुट से घटाकर साढ़े चार फुट कर देना चाहिए। बीच के 8 फुट बाकी मिट्टी खोदकर निकाल देना चाहिए। साढ़े चार फुट की पट्टी पर एक फुट गोल पट्टी चारों ओर निकल आएगी। इसी पर लोहे का गैस टैंक रखा जाता है जो करीब 5 फुट व्यास का और 4 फुट ऊंचा होता है।

चार्ज टंकी में चार किलो गोबर को इतनी ही मात्रा में पानी मिलाकर डाला जाता है जहां वह डाइजेस्टर के पैंदे में पहुंचता है। 8-10 दिन बाद फफूंदी क्रिया प्रारम्भ होती है और गैस बनना प्रारम्भ हो जाता है और बराबर बनती रहती है। प्रति दूसरे दिन 50-50 हिसाब से गोबर घोल डालते रहना चाहिए। यह टैंक गैस के कारण ऊपर उठता रहता है। डाइजेस्टर को चालू रखने के लिए 50-50 के अनुपात में गोबर घोल डालना चाहिए। डिस्चार्ज टैंक से निकला हुआ तलछट के रूप में गोबर का घोल एक अच्छी खाद होता है। उसको उसी रूप में खाद के उपयोग में लाया जाता है। पुआल आदि डालने से उसकी अमोनिया उसमें भूसा आदि में ढकने के कारण हवा में उड़ नहीं पाती। इस प्रकार बनाई गई कम्पोस्ट खाद धूरे की खाद की अपेक्षा विशेष गुणकारी होती है।

जो गैस इसके द्वारा प्राप्त होती है उसे सीधा जलावन गैस के रूप में प्रयोग में लाया जाता है। इसमें मीथेन हाइड्रोजन कार्बनडाई आक्साइड और कुछ नाइट्रोजनीय गैस भी होती है। इनमें मीथेन व हाइड्रोजन गैस जलनशील होती हैं शेष गैस में 50-65 प्रतिशत मिथेन और 8 व 10 प्रतिशत हाइड्रोजन गैस होती है। शेष गैस अल्प मात्रा में होती है। इसमें कार्बन मोनो आक्साइड गैस नहीं होती जो जहरीली होती है। इसलिए घरों में और बन्द स्थानों में इसका प्रयोग हानिकर नहीं है।

शिक्षा प्रसार : 1972-73 में ही वैज्ञानिकों ने इसे जनता के सामने प्रस्तुत कर दिया और दूसरे योजनाकाल में प्रसार व प्रचार के लिए प्रयत्न भी किए गए किन्तु फिर भी लोकप्रिय नहीं हो सकी। देहाती जनता में इसका प्रचार-प्रसार नहीं किया गया। इसके लिए प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन आवयश्क था। मुख्य प्रचार महिलाओं के द्वारा नहीं किया गया। घरों में गृहणियों में इसका प्रचार आवश्यक है। अब सरकार ध्यान दे रही है और गांवो में यह काफी लोकप्रिय हो चला है। इसका फायदा खुद मुझे भी हुआ है क्योंकि मेरे यहा प्लांट लगा हुआ है।

इससे सम्बन्धित सूचनाएं सीधे खादी ग्रामोद्योग कमीशन 'ग्रामोदय' इरलारोड, विले पार्ले पश्चिम, बम्बई-400056 से प्राप्त की जा सकती हैं। इस के अतिरिक्त सभी राज्यों के खादी ग्रामोद्योग कमीशन के द्वारा संचनाए प्राप्त की जा सकती हैं। ●

नेवादर—बावतपुर (रे० स्टे०)
वाराणसी-221202

बन्धुआ मजदूरी की पद्धति : एक अभिशाप

सूर्यदत्त दुबे

हमारे देश में बन्धुआ मजदूरी की पद्धति सामन्तबाद और उपनिवेश-वाद की ही देन है और यह स्वाधीनता प्राप्ति के बाद किये गए अनेक प्रयासों के बावजूद आज भी हमारे समाज को दूषित किये हुए है। वास्तव में यह गुलाम प्रथा का ही एक रूप है जो देश के सभी भागों में विद्यमान है।

यह पद्धति किस प्रकार चल रही है इसके बारे में सभी लोग अच्छी तरह से जानते हैं। सामान्यतः पुत्र-पुत्री के जन्म, विवाह आदि के अवसर पर अथवा अन्य आवश्यकता पड़ने पर किसान ऋणदाता से थोड़ा सा ऋण ले लेता है लेकिन उसकी ब्याज की दर इतनी अधिक होती है कि ऋण की राशि बड़ी तेजी से बढ़ती ही चली जाती है और किसान को अपना ऋण चुकाना असंभव हो जाता है। इस ऋण को चुकाने के लिए वह गरीब किसान अपनी सारी संपत्ति बेच देता है परन्तु फिर भी पूरा ऋण नहीं चुका पाता है। इसका परिणाम यह होता है कि वह नाममात्र की मजदूरी लेकर अपने ऋण दाता के लिए काम करने लगता है। जब जीवन भर कार्य करके भी वह अपने ऋण को नहीं चुका पाता है, तो उसके बेटों और पोतों को भी उस ऋण को चुकाने के लिए नाममात्र की मजदूरी लेकर काम करना पड़ता है। इस प्रकार पीढ़ीदर पीढ़ी वे अपने ऋणदाता के परिवार के गुलाम ही बने रहते हैं।

वर्षों तक गुलाम की तरह कार्य करते रहने से न केवल व्यवसाय संबंधी अकुशलता आ जाती है वरन् मनुष्य मनोवैज्ञानिक रूप से भी अक्षम हो जाता है। बेगार प्रथा न केवल बेहद निर्धनता को ही जन्म देती है वरन् दासता की भावना भी पनपाती है। ऐसे व्यक्ति को उसकी वर्तमान स्थिति से निकालना और उसे नैतिक साहस प्रदान करना एक कठिन कार्य है। इस दिशा में सरकार द्वारा उठाया गया सबसे महत्वपूर्ण कदम राष्ट्रपति का वह अध्यादेश था जो उन्होंने 24 अक्तूबर 1975 को प्रख्यापित किया था। बाद में इसी अध्यादेश के आधार पर संसद् ने बंधित श्रम पद्धति (उत्पादन) विधेयक, 1976 पारित करके बन्धुआ मजदूरों को महाजनों के चंगुल से मुक्त कराने के लिए स्थायी कानूनी व्यवस्था कर दी। राष्ट्रपति के उक्त अध्यादेश में यह कहा गया था कि बन्धुआ मजदूरों पर जो भी ऋण है वह समाप्त हुआ माना जाएगा। उसमें यह भी व्यवस्था की गई थी कि इस संबंध में जिला तथा सब-डिवीजन स्तरों पर सतर्कता समितियां बनाई जाएंगी जिनमें विकास परियोजनाओं में काम करने वाले अधिकारियों तथा ग्राम-विकास-कार्य से संबंधित गैर-सरकारी व्यक्तियों को भी शामिल किया जाएगा। ये समितियां सरकारी तंत्र को सलाह देंगी और बेगार करने वाले श्रमिकों को ऋण तथा उत्पादन संबंधी आदानों के उपयुक्त तरीकों के बारे में बताएंगी।

स्पष्ट है कि भारतीय समाज में दीर्घ काल से चली आ रही यह पद्धति केवल कानून बना देने से ही समाप्त नहीं हो जाएगी। अभी तक इस संबंध में सबसे बड़ी कठिनाई बन्धुआ मजदूरों के बारे में विश्वस्त आंकड़ों का उपलब्ध न होना था और इन आंकड़ों को एकत्र करना भी कोई सरल कार्य नहीं था। पिछले वर्ष गांधी शांति प्रतिष्ठान और राष्ट्रीय श्रम संस्थान के बन्धुआ मजदूरों के बारे में राष्ट्रीय स्तर पर एक सर्वेक्षण किया गया था जिसकी रिपोर्ट इस वर्ष फरवरी के अंतिम सप्ताह में संसद् के दोनों सदनों के सभा पटलों पर रखी गई थी। इस रिपोर्ट के अनुसार विभिन्न राज्यों में बंधुआ मजदूरों की संख्या इस प्रकार है :—

आन्ध्र प्रदेश	3.25 लाख
उत्तर प्रदेश	5.55 लाख
कर्णाटक	1.93 लाख
तमिलनाडु	2.05 लाख
बिहार	1.11 लाख
मध्य प्रदेश	4.67 लाख
महाराष्ट्र	1.05 लाख
राजस्थान	0.67 लाख

सर्वेक्षण की रिपोर्ट में यह भी बताया गया है कि विभिन्न राज्यों के निम्नलिखित क्षेत्र सबसे अधिक प्रभावित हैं :—

प्रदेश	प्रभावित क्षेत्र
आंध्र प्रदेश	तेलंगाना
उत्तर प्रदेश (पश्चिमी)	गन्ना उत्पादक क्षेत्र
उत्तर प्रदेश (पूर्वी)	देवरिया, बलिया, वाराणसी, और मिर्जापुर जिले
कर्णाटक	शिमोगा और बंगलूर जिले
गुजरात	बड़ौदा और पंचमील क्षेत्र उत्तर
तमिलनाडु	और दक्षिण क्षेत्र
बिहार	संथाल परगना, पलामू, और मुंगेर जिले
मध्य प्रदेश	महाकौशल क्षेत्र
महाराष्ट्र	उत्तर-पश्चिमी जिले

इन बन्धुआ मजदूरों में से 66 प्रतिशत अनुसूचित जातियों के और 18.3 प्रतिशत अनुसूचित जनजातियों के लोग हैं। परन्तु इनके स्वामियों में से 84.2 प्रतिशत सवर्ण हिन्दू हैं। बन्धुआ मजदूरों द्वारा लिए गए ऋण की राशि के आंकड़ों से यह पता चलता है कि इनमें से 41.3

प्रतिशत 300 रु० से कम, 23.1 प्रतिशत 300 रु० से 700 रु० तक 15 प्रतिशत 700 रु० से 1100 रु० तक और 15 प्रतिशत 1100 रु० से अधिक राशि उधार लेते हैं। इनमें से 11.6 प्रतिशत मजदूरों को 40 प्रतिशत से भी अधिक वार्षिक दर पर ब्याज देना पड़ता है जबकि 10 प्रतिशत मजदूर 25 से 40 प्रतिशत तक ब्याज देते हैं और 45 प्रतिशत बिल्कुल ब्याज नहीं देते।

जहां तक इन मजदूरों को काम के बदले में मिलने वाली मजदूरी का संबंध है, कहीं-कहीं इन्हें प्रतिदिन 10 घंटे काम करने पर सप्ताह में केवल 15 रु० ही दिये जाते हैं। बन्धुआ मजदूर कहीं भाग न जाए, इसको ध्यान में रखते हुए, मजदूर को अपने लिए सामान आदि खरीदने के लिए जाने देने से पहले उसके बच्चों को बंधक रख लिया जाता है। ऐसे मजदूरों को प्रायः बाहर के लोगों से मिलने नहीं दिया जाता है।

जिन राज्यों में बन्धुआ मजदूर अधिक हैं, उनसे केन्द्रीय सरकार सम्पर्क स्थापित किये हुए है ताकि इन मजदूरों का शीघ्र पुनर्वास हो सके। वित्तीय वर्ष 1978-79 में 12 केन्द्रीय योजनाएं बनाई गई। जिसके लिए दो करोड़ रुपये की राशि रखी गई थी। इसमें से एक करोड़ रु० केन्द्र का हिस्सा था। परन्तु यह एक जटिल प्रशासनिक समस्या है जिसके समाधान के लिए सरकार, प्रशासनिक बैंकों ग्रामीण बैंकों और कृषि क्षेत्र में कार्य करने वाले सामाजिक कार्यकर्त्ताओं को सतत प्रयत्न करते रहने की आवश्यकता है। बंधित श्रम पद्धति का जड़ से उन्मूलन करने और बन्धुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए तुरन्त निम्नलिखित कदम उठाये जाने चाहिएं:—

(1) सतर्कता समितियां अपना कार्य सुचारू रूप से करें और बन्धुआ मजदूरों के पुनर्वास के लिए राज्य सरकारों को उचित सलाह दें।

(2) बन्धुआ मजदूरों को रोजगार कार्यालय में अपने नाम दर्ज कराने के लिए विशेष सुविधाएं दी जाएं और शीघ्र-शीघ्र इनके लिए वैकल्पिक रोजगार दिलाने की व्यवस्था की जाए।

(3) जो बन्धुआ मजदूर कोई स्वतंत्र व्यवसाय करना चाहे उसके लिए व्यवसाय संबंधी आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाए।

(4) कल्याणकारी बोर्ड और कल्याणकारी निधि स्थापित करके बन्धुआ मजदूरों के पुनर्वास में उचित सहायता की जाए।

(5) केन्द्रीय सरकार और राज्य सरकार अपने-अपने बजटों में पर्याप्त वित्तीय राशि का प्रावधान करें, ताकि बन्धुआ मजदूरों की सहायता के लिए ऋण दिया जा सके।

(6) यह सुनिश्चित किया जाए कि मजदूरों को कहीं भी प्रचलित दर से कम मजदूरी न मिले। समाज सेवी संस्थाएं इस ओर विशेष रूप से ध्यान दें। ●

30, हौजरानी,
नई दिल्ली-110017.

दहेज प्रथा : एक अभिशाप

श्रीपाल सांगवान

अब तुम भी कदम बढ़ाना री भारत की देवियों,
शादी में खर्चा करके, सब गहने धरती धरके।
इससे अच्छा मर जाना, भारत की देवियों ।।
अब जेवर मत बनवाओ, इससे स्कूल बनवाओ,
अपनी सन्तान पढ़ाना री, भारत की देवियों ।।

उपरोक्त वाणी है, उत्तर भारत के उन लोक गायकों की जिन्होंने 'दहेज उन्मूलन अभियान' में 'सौरों' की सर्वखाप पंचायत, का संदेश घर-घर पहुंचाया।

देश में विकास की नई कल्याणकारी योजनाओं की सफलता से एक वर्ग समुदाय का 'जीवन स्तर' उभर कर प्रेरणा का संदेश लेकर मध्यम वर्गीय समुदाय के मस्तिष्क पर छाया। परिश्रम का रूप बदला। शिक्षा ने छिपी हुई शक्तियों को परिश्रम का नया रास्ता दिया।

हर वस्तु का निर्धारण 'कागजी मुद्रा' से होने लगा। विशेष कर ग्रामीण समाज से 'अदला बदली' प्रथा प्रायः समाप्त हो चली। यहां तक कि 'विवाह' जैसी पुनीत प्रथा भी सिक्कों की टंकार से दबकर कराह उठी। कन्याओं के लिए सिक्कों से 'वर' खरीदे जाने लगे। धन, धरती और सम्मान जब पिताओं के लिए बचाना दुष्कर प्रतीत होने लगा तब ऐतिहासिक सर्वखाप पंचायत का सम्मेलन 'सौरों' में हुआ।

सौरों या सौरम उत्तर प्रदेश के मुजफ्फर नगर जनपद में बुढ़ाना तहसील का एक ग्राम है। यहीं हुआ था सन् 1952 में यह सम्मेलन जिसमें भारत के पच्चीस हजार विभिन्न क्षेत्रों के ग्रामवासियों ने भाग लेकर, दहेज प्रथा का बहिष्कार किया था ...... और हवा में गूंज उठी 'लोक गायकों' की यह स्वर लहरी ......

तुम बुलाना पंच बराती, उनकी खुद पौना चपाती।
हलवाई मत बुलवाना री, भारत की देवियों।
टेवे पै एक रुपैया, फेरों पै दूध की गईया।
बर्तन पांच दिलाना री, भारत की देवियों ।।

योजनाओं की सफलता से हर वर्ग की औसतन आय बढ़ती रही। जीवन स्तर ऊंचा उठा। व्यय बढ़े। और साथ ही बढ़ती रही मानसिक वेदनाएं। मध्यम वर्ग की दस वर्ष की गाढ़ी कमाई शादी में दिये जाने वाले 'दहेज' पर ही स्वाहा होने लगी। सर्वखाप पंचायत का पारित प्रस्ताव दो वर्ष में ही टूट कर धराशायी हो गया। 'दहेज' जीवन का अनिवार्य अंग बन गया। कन्या जन्म को 'डिग्री का फतवा' मिल गया।

यदि हम गहराई से ग्रामीण समाज के पिछड़ेपन का अध्ययन करें तो उनके पिछड़े पन का एक ही कारण है और वह है 'दहेज प्रथा'! कन्या के विवाह से कई वर्ष पहले से ही सम्पूर्ण तैयारियां युद्ध स्तर पर की जाती है और विवाह के कई वर्ष बाद तक शेष कर्जा उतारा जाता है। एक शादी में ही सम्पूर्ण परिवार कई वर्ष तक निराशा के समुद्र में गोता लगाता है।

धरती मां के गर्भ से सोना उगाने वाले ग्रामवासियों के उत्थान का केवल एक ही रास्ता है कि वे इस दहेज प्रथा का बहिष्कार करें।

(शेष पृष्ठ 35 पर)

भारतीय नारी समाज : कल और आज

तारादत्त निर्विरोध

हमारे शास्त्रों में नारी को प्रकृतिरूपा और प्रकृति को परम पुरुष की इच्छा का प्रतिफलन कहा गया है। नारी पुरुष-जन्य प्रकृति है और प्रकृति पुरुष की अन्तश्चेतना तथा अन्तर्वृति। प्रकृति ने नारी और पुरुष की उत्पत्ति सृष्टि के संचालन की दृष्टि से की, दोनों को एक दूसरे का पूरक बनाया।

सृष्टि के आदिकाल से भारतीय नारी अपने पावन और ज्योतिर्मय स्वरूप के कारण पुरुष की महत्वाकांक्षाओं का कारण रही तथा उसे अपेक्षित सम्मान व गौरव प्राप्त होता रहा। प्रागैतिहासिक, ऋग्वैदिक एवं उत्तर वैदिक कालीन नारी की स्थिति का रूपांकन वेदों, उपनिषदों, पुराणों, स्मृतियों, श्रुति, शास्त्र, रामायण, महाभारत और जैन-बौद्ध ग्रंथों में तथा सुधीगण की कृतियों में विविध रूपों में किया गया। संस्कृत के महाकवि कालिदास, भवभूति, भारवि, माघ, श्रीहर्ष, भतृहरि, जयदेव एवं पण्डितराज जगन्नाथ के काव्य-ग्रंथों में भी भारतीय नारी के वास्तविक और सनातन स्वरूप को उजागर किया गया।

नारी, संस्कृति की प्रतिरूपा, संगीतप्रिया, कलाकर्ती और साहित्यानुरागिणी रही। वह सामाजिक कार्यों में निपुण और अग्रगामी भी रही। ऋग्वेद और सामवेद में ऋषिका या ब्रह्मवादिनी कही जाने वाली 31 नारियां वैदिक ऋचाओं की रचनाकार थीं। इस युग की नारी अपने पिता की सम्पत्ति की अधिकारिणी और शक्ति, मेधा, क्षमा, दया, त्याग, सेवा और प्रेम की साक्षात प्रतिमा थी। उसका दिव्य स्वरूप प्रेरणा का अजस्र स्रोत था।

बौद्धिक नारी

उत्तर वैदिक युग की नारी को धार्मिक एवं बौद्धिक क्षेत्र में पुरुष के समान ही अधिकार प्राप्त थे किन्तु कालान्तर में नारी के अधिकार सीमित होते गए और इस बदलाव के कारण उस में फिर चेतना का प्रादुर्भाव हुआ। वह फिर धार्मिक एवं सामाजिक कार्यों में आगे आई। दुर्गा सप्तशती, रामायण, महाभारत और जैन धर्म की कृतियों में वह विविध रूपों में वर्णित की गई। महात्मा बुद्ध के शिष्यों में भी 13 महिलाएं रहीं, जो धर्म प्रचार में अगुवा थीं।

फिर नारी अन्तःपुर की बधुओं, परिचारिकाओं और विलासिनियों के विभिन्न रूपों में ढलती चली गई। किन्तु संस्कृत ग्रंथों रघुवंश, हर्षचरित, कादम्बरी आदि में वह चर्चित रही।

श्रृंगारी नारी

हिन्दी के आदिकवि एवं गीतकार विद्यापति की श्रृंगारी नारी यद्यपि राज प्रासादों में सम्मानित एवं समलंकृत थी और नख से शिख तक सजी-संवरी थी तथापि वह श्रृंगार की पराकाष्ठा के कारण दोषरहित भी नहीं थी। वह युद्ध का कारण भी रही।

मुगलकाल में निर्गुणधारा के ज्ञानमार्गी संतों ने नारी के दाम्पत्य भाव, स्वकीया भाव एवं पतिव्रता रूप को ही स्वीकारा। उनकी दृष्टि में नारी-सौंदर्य जीवन के सर्वांगीण विकास में बाधक और मोहजाल का कारण बना रहा। सूफी कवियों की "प्रेम की पीर" ब्रह्म और इष्ट के लिए थी। तब नारी जीवन के विरोधाभासों, असंगितियों, विक्षोभ और असमानताओं के बीच निराश्रित ही थी। वह पूर्णतः स्वतन्त्र भी नहीं थी। उस समय समूचा समाज, आपसी भेदभाव, निरंकुशता एवं अनुशासनहीनता के कारण विश्रृंखलित था। नारी भोग विलास और मनोरंजन से परे कुछ नहीं थी।

किन्तु राजस्थान की वीर प्रसूता धरती ने घनी विषमताओं के बीच भी पद्मिनी और पन्ना दायी जैसी महिमामयी नारियों का मार्ग प्रशस्त किया। यहां की राजपूत नारी ने सब कुछ बर्दाश्त किया, किन्तु कौमार्य की रक्षा या टूटते विश्वास अथवा कुल की लाज के लिए उसने आत्मोत्सर्ग में ही जीवन की सार्थकता समझी। न तो वह दुश्मन की हो सकी और न ही उसने युद्ध से लौटे हुए कायर पति को स्वीकार किया। उसने तो वीरगति प्राप्त भारतीय सैनिक की विधवा होने में ही सुख अनुभव किया और वह हंसती हुई अग्नि में राख हो गयी।

दूध की अन्तर्कथा

एक राजपूत कुल में जब एक वयोवृद्धा के अतिरिक्त सब युद्ध में काम आ गए तो परिवार की समधिन सान्त्वना देने के लिए आई। वयोवृद्धा ने कहा "बहन, युद्ध में मर मिटने वाले इस परिवार के वीरों एवं वीरांगनाओं की वीरता की क्या प्रशंसा करूं? मेरे पुत्र ने मेरे दूध को नहीं लजाया है। वह सैंकड़ों को मौत के घाट उतार कर मरा है। लेकिन तेरा दूध मेरे दूध से भी सवाया है।"

समधिन ने उत्सुकतापूर्वक पूछा "यह कैसे?"

वयोवृद्धा ने बताया "मेरा पुत्र वीर की की तरह मरा यह तो मेरे लिए गौरव की बात है, किन्तु जब हाथ कट गया तो उसके हाथ से तलवार गिर पड़ी। बस मुझे इस बात का दुख है। लेकिन तेरी बेटी ने चिता से जलकर भी हाथ से नारियल नहीं गिरने दिया। मेरा पुत्र तो युद्ध में कवच पहन कर गया था लेकिन तेरी बेटी ने तो आग में जाते समय भी मलमली परिधान पहनना ही पसन्द किया।"

बहन, इसीलिए तेरा दूध मेरे दूध से ज्यादा गौरव प्रदान करने वाला है।"

वे युग बीत गए और वे बातें समय-संदर्भ तक रह गईं। नारी का रूप समय के साथ परिवर्तित होता चला गया और उसने स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रगति के कई सोपान चढ़े। कल की नारी आज तक आकर और भी प्रगतिशील हो गई। उसके जीवन की स्थितियां और परिवेश बदल गए।

तात्पर्य यह कि वैदिक युग की सभ्य नारी उत्तर वैदिक युग के सांस्कृतिक सोपान चढ़कर रामायणकालीन सुख शांति में पलकर और जैन बौद्ध धर्मों में प्रशिक्षित होकर गुप्तकाल की विसंगतियों का विरोध करती हुई राजपूत काल की जय-पराजय स्वीकारती तथा मुगलकालीन राजनीतिक उलटफेर के चक्रव्यूह से निकल अंग्रेजी युग की कुंठा की काराओं से उबर कर अब स्वतन्त्रता की सांस ले रही है।

परिवर्तित परिवेश

आधुनिक युग में भारतीय नारी ने नए जीवन में पदार्पण किया और उसकी राजनीतिक, धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और अन्य क्षेत्रों की गतिविधियों में परिवर्तन आया और वह सभी दिशाओं में विकासोन्मुख हुई।

स्वतन्त्रता के बाद देश में नारी के अधिकारों की काफी चर्चा रही और महिलाओं को विभिन्न क्षेत्रों में पुरुषों की बराबरी का दर्जा दिया गया, जिससे भारतीय नारी की मानसिकता एवं व्यावहारिकता में आशातीत परिवर्तन आया। वह रूढ़िवादिता, अंधविश्वास, परम्परागत दकियानुसीपन एवं अज्ञान के अंधकार से निकल कर प्रकाश में आई और उसका कार्य क्षेत्र बढ़ गया।

देश की शहरी महिलाएं जहां दफ्तरों कारखानों और अन्य महत्वपूर्ण कार्यों में आगे आईं, वहां ग्रामीण तथा कामकाजी महिलाएं भी समय की गति के साथ हो चलीं। आज की नारी कहीं भारतीय प्रशासनिक सेवा और पुलिस सेवा में रत है तो कहीं राजनेत्री, इंजीनियर, डाक्टर, पायलट, प्रोफेसर, लेखिका और संपादिका है तो कहीं खेतों, दस्तकारी, कुटीर उद्योग तथा व्यावहारिक क्रिया कलापों में अस्तित्व बनाए हुए है।

भारत में आज 26 करोड़ स्त्रियों में से 18.7 प्रतिशत महिलाएं शिक्षित हैं और देश की कुल साक्षरता में 7 लाख महिलाएं स्नातक और 30 लाख मैट्रिक हैं। स्नातक महिलाओं में 20 प्रतिशत और 5 प्रतिशत मैट्रिक महिलाएं नौकरी पेशा हैं। ●

तारादत्त निर्विरोध,
जन सम्पर्क अधिकारी,
अलवर (राजस्थान)

राजस्थान के दूरदराज गांवों में मण्डी नियमन का प्रचार

डा. महेन्द्र मधुप

कोई भी योजना बनाई जाए, जब तक वह विचार शक्ति का अंग नहीं बन जाती, अपने मूल लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकती। यदि यह योजना उन लोगों के लिए हो, जो मेहनत को धर्म मानकर कर्म के लिए समर्पित हों, किन्तु अधिकांशतः बिना पढ़े-लिखे हों, तो कल्याणकारी योजना का लाभ पहुंचाना और कठिन हो जाता है। ऐसी ही स्थिति निर्धन और अनपढ़ किसानों को उनके उत्पादन का उचित मूल्य दिलाने के लिए मण्डी नियमन योजना बनाने के बाद आई।

कर्म के प्रति विश्वास

किसान बाप-दादाओं से यह सुनता आया है कि उसकी मेहनत का फल अनाज के सोने की तरह चमचमाते दाने, मिट्टी के मोल मांग कर साहूकार इसलिए ले जाता है कि पूर्व जन्म में उसने बुरे कर्म किए थे और साहूकार ने अच्छे। इस पराजय और भगोड़ेपन की भावना ने ऐसी मनोदशा किसान में पैदा कर दी कि सबका पेट भरकर भी वह आधे पेट सोता है। बच्चों द्वारा रोटी मांगने पर वह भाग्य को रोता है। दुलहनिया आंसुओं और भूख को निगलने कंकाल मूर्ति बन जाती है। इस पराजय की भावना से किसान को उभार कर ही मण्डी नियमन योजना को सफल बनाया जा सकता है। मण्डी समिति में 15 में से सात सदस्य किसान होते हैं। 1963 में मण्डी कानून बनने के बाद से किसान को पहले से दस प्रतिशत से अधिक लाभ हुआ, किन्तु सदियों से आत्मविश्वास का जो दीपक मंद पड़ गया, उसमें कर्म का मूल्य प्राप्त करने के संकल्प का तेल भरे बिना, संख्याओं की यह जोड़ बाकी, किसान के मन का सहज उल्लास पूर्ण रूप से नहीं बन सकी।

प्रचार के नए तरीके

मण्डी नियमन योजना किसानों द्वारा ही बनाई गई थी और किसान को सदियों से इंसान ही लूट रहा है। आदमी के प्रति उसकी आस्था कमजोर पड़ चुकी है। बहुत कम किसान पढ़े-लिखे हैं, वे मण्डी नियमन कानून को पढ़ भी नहीं सकते। अतः उसको लूटने वाले वर्ग ने इसे "काला कानून" बताया और कहा कि इसके द्वारा वह तबाह हो जायगा।

अदालतों में जब इन तत्वों को कानून के विरोध में असफलता मिली तो किसान को अफवाहों द्वारा भरमाया जाने लगा। बेचारा किसान इस षडयंत्र को क्या समझता। ऐसी स्थिति में पढ़े-लिखे बुद्धिजीवी अखबारों में किसान-क्रांति के गीत गाकर नई सुबह का इंतजार कर रहे हैं, किन्तु दूर-दराज गांवों में इसकी दस्तक तक नहीं पहुंची। पढ़े-लिखे किसानों ने अवश्य लाभ उठाया। अब छपी सामग्री के स्थान पर रेडियो, टेलीवीजन, फिल्म, प्रदर्शनियों, कठपुतली व अन्य आधुनिक प्रसार साधनों का सहारा लिया गया। इनके द्वारा मण्डी नियमन को समझाने का प्रयास किया जा रहा है। पुरानी मण्डी की हानियों और नई मण्डी की उपयोगिता को उसके मानस में उतारा जा रहा है। उसे यह समझाने का यत्न किया जा रहा है कि उसके हाथ ही भाग्य निर्माता हैं, मेहनत का फल भीख या कृपा नहीं उसका अधिकार है। और इस अधिकार के लिए अन्तिम दम तक संघर्ष उसके जीवन की डोर है, इसके अभाव में वह जिन्दा लाश है।

दूरदराज गांवों में

दूरदराज गांवों के किसानों में आत्म-विश्वास की अलख जगाने व इसके द्वारा नये समाज के निर्माण के लिए कृषि विपणन बोर्ड ने युवा लोगों को लेकर एक प्रचार इकाई बनाई जो गांव-गांव में मण्डी नियमन के बारे में फिल्म प्रदर्शन व प्रदर्शनियां आयोजित कर किसानों को मण्डी नियमन की आत्मा से जोड़ने का प्रयास कर रही है। सभी प्रमुख मेलों में इस कार्य के लिए प्रचार वाहन जाता है। गांवों की चौपलों पर किसानों के साथ बैठकर मण्डी नियमन पर चर्चा होती है। उनकी समस्याएं सुनी जाती हैं और हर सम्भव उनको हल करने का यत्न किया जाता है। किसानों को समझाया जाता है कि योजना उनकी है और उनकी सजगता व हिम्मत से ही योजना का असल लाभ मिल सकेगा।

राज्य स्तरीय सम्मेलन

इलाके में जाकर किसान की मूलभूत समस्याओं का पता लगता है। इसके अतिरिक्त जो भोक्ता है वही समस्या सुलझा सकता है। यही कारण है कि हाल ही में मुख्यमंत्री जी ने किसानों, मण्डी में कार्यरत व्यापारियों के प्रतिनिधियों तथा मण्डी अधिकारियों का राज्य-स्तरीय सम्मेलन जयपुर में बुलाने की घोषणा की, जिसमें एक जगह बैठकर सबको सुना जायेगा और निर्णयों के आधार पर राज्य सरकार मण्डी कानून में परिवर्तन करेगी। इससे अपने हितों की रक्षा के लिए बनी इस योजना को साकार करने में किसान योजना-निर्माता की भूमिका अदा कर सकेगा।

किसानों में संगठन भावना

अनुभवों से स्पष्ट हो गया है कि गरीब किसानों में अपने हित की रक्षा के लिए जब तक सामूहिकता की भावना पैदा न होगी, तब तक वे उत्पादन का सही हल न पा सकेंगे। इसके लिए विपणन बोर्ड विचार कर रहा है कि राष्ट्रीय श्रम संस्थान के सहयोग से आदिवासी व पिछड़े इलाके के किसानों के लिए कैम्प लगाए जाए, जिनमें उनको सामूहिक हितों तथा मण्डी नियमन योजना के लाभों से अवगत कराया जा सके। इन कैम्पों में किसान बिना कोई खर्चा किए रहेंगे और मिल कर बैठकर जीने के लिए उचित सुविधाओं की प्राप्ति हेतु संगठन का प्रशिक्षण पाएंगे।

अन्य प्रयास

इसके अतिरिक्त अनेक कार्यक्रम प्रचार हेतु हैं। मण्डी नियमन योजना व कानून की जानकारी किसान को देने के लिए जल्द फिल्म बनाई जाएगी जो गांव-गांव में किसानों को दिखाई जाएगी। राष्ट्रीय व स्थानीय समाचार पत्रों के माध्यम से व ग्राम पंचायत स्तर पर पोस्टकार्ड आदि के द्वारा निरन्तर मण्डी नियमन योजना से किसानों को अवगत कराया जा रहा है। मण्डियों के सूचना पट्टों पर अन्य मण्डियों के बाजार भाव लिखे जाते हैं। उनका लाउडस्पीकरों से भी मण्डी प्रांगण में प्रसारण होता है। यह प्रयत्न किया जा रहा है कि मण्डी अधिकारी किसानों के निकट जाकर उनकी समस्याओं को सुनें व प्रयत्न करें कि उपज का अधिक से अधिक लाभ किसान को मिले। यह प्रचार कार्य लम्बा व कठिन है। यह कहना गलत न होगा कि इसमें पूर्ण सफलता प्राप्त करने के लिए सामाजिक क्रान्ति की आवश्यकता है। गांवों के पढ़े लिखे बेटे-बेटियां तथा नगरों के नौजवान बौद्धिक कसरत से निकलकर जिस दिन गांवों की पगडंडियों पर किसानों को उनकी शक्ति का आभास दिलाते मिलेंगे उस दिन मण्डी नियमन योजना को मूल भावना साकार होगी। ●

डा० महेन्द्र मधुप
जन सम्पर्क अधिकारी
राजस्थान राज्य कृषि
विपणन बोर्ड, जयपुर

उत्पादकता जीने का एक व्यवस्थित तरीका है।

दिल्ली के ग्रामीण क्षेत्रों में स्वास्थ्य सुविधाएं ❋ —हरि भारद्वाज

दिल्ली भारत की राजधानी है। दिल्ली का नाम लेते ही एक सुन्दर और भव्य नगर की झांकी दृष्टि के सामने आ जाती है। किन्तु दिल्ली मात्र एक नगर ही नहीं बल्कि इसकी सीमा के अन्तर्गत एक विशाल ग्रामीण क्षेत्र भी आता है जो कि दिल्ली नगर के चारों ओर फैला है। इसमें लगभग 250 छोटे-बड़े गांव बसे हुए हैं। दिल्ली से निर्वाचित सात संसद् सदस्यों में से दो सदस्य दिल्ली के गांवों द्वारा ही चुने जाते हैं।

यह तो स्वाभाविक है कि जितनी सुख-सुविधाएं दिल्ली शहर के नागरिकों को उपलब्ध हो सकती हैं उतनी गांवों में बसने वाले लोगों को नहीं जुटाई जा सकतीं। फिर भी सरकार ने दिल्ली के गावों की आवश्यकताओं की पूर्ति करने में काफी सन्तोषजनक कार्य किए हैं जिसका परिणाम यह है कि दिल्ली के गांव सफाई, स्वास्थ्य, शिक्षा, परिवहन आदि सुविधाओं में दूसरे राज्यों के एक छोटे शहर का मुकाबला कर सकते हैं। प्रस्तुत लेख में हम केवल यहां के गांवों को उपलब्ध स्वास्थ्य सुविधाओं की ही चर्चा करेंगे।

दिल्ली देहात में निम्नलिखित संस्थानों द्वारा न्यूनाधिक मात्रा में चिकित्सालयों द्वारा स्वास्थ्य सेवाएं दी जा रही हैं :— (1) दिल्ली प्रशासन (2) दिल्ली नगर निगम (3) केन्द्रीय सरकार (4) दिल्ली विकास प्राधिकरण (5) कर्मचारी राज्य बीमा निगम (6) दिल्ली कैन्टोनमेंट बोर्ड (7) दिल्ली परिवहन निगम एवं (8) अन्य स्वैच्छिक संस्थाएं।

उपर्युक्त संस्थाओं द्वारा विभिन्न चिकित्सा प्रणालियों के अन्तर्गत गांवों में चिकित्सालय खोल रखे हैं। सस्थानुसार एव चिकित्सा प्रणाली के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों में 31 दिसम्बर, 1977 तक चलाए जा रहे चिकित्सालयों की स्थिति निम्न तालिका में दी गई है :—

विभिन्न प्रणालियों के अन्तर्गत खोले गए चिकित्सालय

क्रम सं०	संस्था का नाम	ऐलो-पैथिक	आयुर्वेदिक	यूनानी	होम्यो-पैथिक	कुल
(1)	दिल्ली प्रशासन	18	—	—	—	18
(2)	दिल्ली नगर निगम	21	5	3	3	32
(3)	केन्द्रीय सरकार (सी०जी० एच०एस०)	1	—	—	—	1
(4)	दिल्ली विकास प्राधिकरण	3	—	—	—	3
(5)	दिल्ली परिवहन निगम	4	—	—	—	4
(6)	कर्मचारी राज्य बीमा निगम	4	—	—	—	4
(7)	स्वैच्छिक संस्थाएं	—	1	1	—	2
	कुल :	51	6	4	3	64

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि अधिकतर चिकित्सालय दो संस्थाओं दिल्ली प्रशासन और दिल्ली नगर निगम द्वारा ही चलाए जाते हैं। इन संस्थाओं द्वारा दिल्ली के शहरी एवं ग्रामीण क्षेत्र दोनों में कुल 174 चिकित्सालय चलाए जाते हैं जबकि केवल ग्रामीण क्षेत्रों में इन संस्थाओं के कुल 50 चिकित्सालय हैं जो कुल चिकित्सालयों का 29 प्रतिशत होता है। यह संख्या काफी सन्तोषजनक कही जा सकती है।

चिकित्सालयों के अतिरिक्त दिल्ली नगर निगम ने ग्रामीण क्षेत्रों में 5 प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र खोल रखे हैं जिनमें 47 बिस्तरों की व्यवस्था है। केन्द्रीय सरकार ने भी तीन गांवों में ऐसे ही प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र खोले हैं जिनमें 29 बिस्तरों की व्यवस्था है। प्राथमिक स्वास्थ्य-केन्द्र केवल ग्रामीण क्षेत्र में ही हैं। दिल्ली शहर में एक भी नहीं है।

जच्चा-बच्चा कल्याण

भारतीय माताओं का त्याग एवं निःस्वार्थ सेवा भावना जगत् प्रसिद्ध है। वे अपने परिवार के कल्याण के लिए सर्वस्व न्यौछावर करने को तैयार रहती हैं। उन्हीं माताओं द्वारा प्रसवित शिशु भी भविष्य के कर्णधार होते हैं। अतः इन दोनों के कल्याण की बात सोचना राष्ट्र के हित चिन्तन में प्रथम कोटि पर आ जाता है। किन्तु निर्धनता और सीमित साधनों के कारण भारत के गांवों में प्रसव अधिकतर अशिक्षित और अयोग्य दाइयों की देख-रेख में ही कराए जाते हैं। भारत में शिशु मृत्यु-दर बहुत अधिक है। 1971 में यह 122 प्रति हजार थी। यह एक दुखद स्थिति है।

दिल्ली नगर निगम ने इस क्षेत्र में काफी सराहनीय काम किया है। अनेक संस्थाओं के वर्ष 1977 तक शहरी दिल्ली में कुल 175 जच्चा-बच्चा कल्याण-केन्द्र थे जबकि अकेले नगर निगम के केवल दिल्ली के ग्रामीण-क्षेत्रों में ही 50 जच्चा-बच्चा कल्याण केन्द्र चल रहे हैं। औसत के हिसाब से यह संख्या दूसरे राज्यों की तुलना में सर्वाधिक है।

बड़े अस्पताल

बड़े अस्पतालों की संख्या दिल्ली के गांवों में अभी बहुत कम है। दिल्ली शहर में जहां अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, लोक नायक जयप्रकाश नारायण अस्पताल, राम मनोहर लोहिया अस्पताल आदि बहुत से सरकारी व गैर-

सरकारी औषधालय हैं, वहां गांवों में केवल दो अस्पताल ही इस समय चल रहे हैं। एक आयुर्वेदिक अस्पताल हैदरपुर और दूसरा टी० बी० क्लिनिक नरेला में दोनों ही नगर निगम के हैं।

किन्तु इस क्षेत्र में दिल्ली प्रशासन अब काफी प्रयत्नशील है। प्रशासन शीघ्र ही दिल्ली के पांच विकास खंडों में पांच 100–100 बिस्तरों के अस्पताल खोलने जा रहा है। अलीपुर ब्लाक के नंगली गांव, नजफगढ़ ब्लाक के जाफरपुर गांव और कंझावला ब्लाक के पूठखुर्द गांव में तो भूमि भी ले ली गई है। इसके अतिरिक्त, दो और 100-100 बिस्तरों के अस्पताल खिचड़ीपुर और मंगोलपुरी पुनर्वासित कालोनियों में खोलने का निर्णय किया गया है, क्योंकि वहां की जनता की समस्याएं भी ग्रामीण क्षेत्रों जैसी ही हैं। इन दोनों स्थानों में भी भूमि प्राप्त कर ली गई है। इसके अतिरिक्त, दो 500 बिस्तरों के अस्पताल बनाने का प्रस्ताव है। एक हरीनगर पश्चिमी दिल्ली में जिसकी नींव नवम्बर, 1977 में रखी जा चुकी है और दूसरा शाहदरा में बनाया जाना है। ये दोनों अस्पताल 100-100 बिस्तरों वाले होंगे और समस्त ग्रामीण क्षेत्र के रोगियों का भार वहन करेंगे।

परिवार कल्याण

दिल्ली के गांवों में नगर निगम के चार परिवार कल्याण केन्द्र हैं। ये अलीपुर, कंझावला, मेहरौली और नरेला में हैं। ऐसा एक केन्द्र नजफगढ़ में भी केन्द्रीय सरकार द्वारा चलाया जा रहा है।

परिवार कल्याण के प्रति जनता पार्टी की सरकार का नया दृष्टिकोण राष्ट्रपति द्वारा संसद् में दिए गए 28 मार्च, 1977 के भाषण से उद्धृत अंशों से देखा जा सकता है। "परिवार नियोजन को एक ऐच्छिक कार्यक्रम तथा एक व्यापक नीति के अभिन्न अंग के रूप में जोरदार ढंग से चलाया जाएगा जिसमें शिक्षा, स्वास्थ्य, मातृ-केन्द्र और बाल कल्याण, परिवार कल्याण, महिला अधिकार और पौष्टिक आहार शामिल हैं।" इस प्रकार नई नीति में जोर जबरदस्ती के स्थान पर परिवार के सर्वांगीण कल्याण के साथ-साथ व्यक्ति की गरिमा को भी महत्व दिया गया है। इसी तथ्य को दृष्टि में रखते हुए जनसंख्या की अनियन्त्रित वृद्धि को रोका जाएगा।

बहूद्देश्यीय स्वास्थ्य योजना

यह नई योजना केन्द्रीय सरकार द्वारा सारे देश में लागू की जा रही है। दिल्ली प्रशासन द्वारा भी उसी के अनुसार यहां के गांवों में इस नई योजना को चलाया जा रहा है।

प्रत्येक 5,000 की आबादी पर दो बहूद्देश्यीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता (एक पुरुष और एक महिला) रखे जाएंगे। प्रत्येक बहूद्देश्यीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता को विभिन्न प्रकार की स्वास्थ्य सम्बन्धी सेवाएं करने के लिए प्रशिक्षित किया जा रहा है। जैसे चेचक, हैजा, मलेरिया आदि से बचाव के टीके लगाना, साधारण स्वास्थ्य, प्रसूति एवं शिशु की देखभाल, परिवार कल्याण सेवाएं, आहार कार्यक्रम आदि एक ही कार्यकर्ता के जिम्मे होंगे और प्राथमिक चिकित्सा केन्द्र एवं मातृ व शिशु-कल्याण केन्द्र की देख-रेख में कार्य करेंगे।

इसके अतिरिक्त, 1,000 की आबादी वाले प्रत्येक गांव अथवा समुदाय को अपना एक सेवा प्रतिनिधि चुनने के लिए कहा जाएगा जिसमें लोगों की सेवा करने की रुचि हो और जिसे लोगों का विश्वास भी प्राप्त हो। ऐसा होने के बाद उस व्यक्ति को साधारण और बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं का तीन महीने का प्रशिक्षण दिया जाएगा। उसके बाद उसे दवाइयां दी जाएंगी जिससे कि वह हर समय जनता की आम बीमारियों के इलाज के लिए उपलब्ध हो सकें। ये समुदाय कार्यकर्ता बहूद्देश्यीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता के निरीक्षण में और उनकी सलाह से कार्य करेंगे।

ये दोनों योजनाएं नई हैं। इसलिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र के चिकित्सकों को प्रशिक्षण दिया गया है और उन्होंने बहूद्देश्यीय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं को भी प्रशिक्षण देना प्रारम्भ कर दिया है। जैसे ही स्टाफ प्रशिक्षण ग्रहण करेगा तभी समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ता योजना लागू हो जाएगी। समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ता को भी प्रशिक्षण दिया जा रहा है। जिससे वह अपने क्षेत्र में जाने के लिए तैयार हो सके। समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ता स्थानीय व्यक्ति होने के कारण और दिन-प्रतिदिन की छोटी बीमारियों के इलाज आदि में प्रशिक्षित होने से वह गांव की स्वास्थ्य सम्बन्धी देखभाल के लिए लाभदायक सिद्ध होगा। इस समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ता को 200 रुपये तीन महीने की प्रशिक्षण की अवधि में दिए जाएंगे और उसके बाद 60 रुपये प्रति माह दिए जाया करेंगे। इलाज के लिए दवाइयां सरकार द्वारा ही दी जाएंगी। ●

—हरि भारद्वाज
204-नरेला, दिल्ली-119040

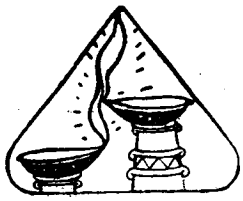

दीप से दीप जले

कहानी

एक सुख सबका *

बटुकेश्वर दत्त सिंह 'बटुक'

भोर की चिड़िया बोलते ही नव-विवाहिता सुशीला के हृदय में एक हूक सी उठने लगती है। अभी उसकी सासजी दरवाजे की कुंडी खड़काने ही वाली हैं। इसे सोचते ही उसके हृदय की धड़कनें तेज हो जाती हैं और वह अपने को सर्वाधिक असहाय पाती है। वैसे उसे अपनी ससुराल में और सभी सुख हैं।

यथानाम तथा गुणों वाली बहू को पाकर उसका पति ही नहीं, उसके सभी नए संबंधी सन्तुष्ट हैं। किसी को असन्तुष्ट होने का वह कभी अवसर भी तो नहीं देती। घर की बूढ़ी-दादी मां से लेकर सास, ननद, जेठानी यहां तक कि पड़ौस की बहू-बेटियां तक उसके सरल, निश्छल तथा हंसमुख स्वभाव की प्रशंसा करती हैं। उसने अपनी विनम्रता तथा सभी के प्रति यथोचित सम्मान प्रदर्शन से प्रत्येक का पूरा स्नेह पा लिया है। अपरिचित वातावरण में उसने अपने आप को कुछ दिनों में ही जिस खूबी से ढाला है वैसा कर पाना सरल नहीं होता। कैसी भी परिस्थिति क्यों न हो, वह सदैव प्रसन्न मन कार्यरत रहती है। किसी ने कभी उसे उदास नहीं देखा।

परन्तु सभी को सुखी और सन्तुष्ट रखने वाली सुशीला स्वयं में एक असंतोष छुपाये हुए ससुराल के समस्त सुखों में जिस प्रकार जी रही थी उसे अब तक उसने किसी से प्रकट नहीं किया था। जैसा गांवों में होता आया है उसकी सासजी भी नित्य प्रातः मुंह अंधियारे ही उसे अपने साथ ले जाकर गांव के बाहर खेतों से शौचादि क्रियाओं के उपरान्त लौट आती हैं। कभी देर हो जाए तो उजाला हो जाने पर गर्मी के दिनों में कहीं सुविधाजनक स्थान नहीं मिल पाता, इसी से वह सुशीला को नित्य भोर की चिड़िया बोलते ही जगा देती हैं। गर्मी की रातें होती ही कितनी बड़ी हैं। सम्मिलित परिवार में आधी रात बीतने को हो आती है तब कहीं घर गृहस्थी के कामों से फुर्सत मिलती है। सुशीला से पति-सानिध्य का सुख भोर की चिड़िया "ठाकुर जी, ठाकुर जी" बोलकर कब छीन लेगी इसी आशंका में उसे सुख की नींद भी नहीं आती। रात के आखिरी पहर में गांव के खुले वातायन से लहरा कर आती हवाओं के तन मन में सिहरन के उभरते झोंके जब हर किसी को कुछ देर और नींद की गोद में भूले रहने को ललचाते हैं उसे उजाला होने की असुविधाओं के कारण पति सानिध्य का सुख छोड़कर बिस्तर से उठ जाना पड़ता है।

सुशीला को वह सुबह कभी नहीं भूलती जब वह अपनी सासजी के साथ बाहर खेतों में नित्य क्रियादि के लिए गई थीं। गांव की बड़ी-बूढ़ी औरतों के अतिरिक्त कुछ उसकी समवयस्का अन्य पड़ौसी घरों की लड़कियां और बहुयें वहां मिल गई थीं। वे सभी एक दूसरे से मिलकर प्रसन्न थीं। तभी कोई बुजुर्ग खांसते-खंखारते हुए खेत की मेंड़ पर दूर से आते हुए दिखाई दिए। सभी स्त्रियां अपने-अपने स्थानों पर दूसरी ओर मुंह घुमाकर खड़ी हो गईं। कुछ देर बाद अभी वे आश्वस्त हो पुनः ही बैठी थीं कि एक अन्य महाशय दूसरी ओर से खड़ाऊं खटकाते आ निकले। वे सभी सावधान की हालत में खड़ी हो गईं। जाने कौन किस स्थिति में रही हो सभी को विवश हो उठने बैठने की यह कवायद कई बार करनी पड़ी। सुशीला को उस दिन अपने जीवन का यह पहला अवसर था। असुविधा का वैसा कड़आ अनुभव वह और अधिक बार नहीं करना चाहती, तभी तो उषा की लालिमा उभरने से पहले ही भोर की चिड़िया बोलते ही अनचाहे मन से सभी कुछ यंत्रवत् करते हुए भी अपने व्यवहार में कहीं किस प्रकार का असंतोष नहीं प्रकट् होने देती।

सावन में नागपंचमी से पहले उसका भाई उसे पहली बार ससुराल से विदा कराने आया था। बहन से मिलने पर उसने पूछा—'तेरी ससुराल वालों ने तुझे कोई कष्ट तो नहीं दिया, सुशीला।' तो उसके अन्तःमन में दबी पीड़ा मुखर हो आई। बड़ी गम्भीरता से उसने अपनी अन्तर्व्यथा बताई—'यहां के लोगों ने तो कोई नहीं दिया, भैया। परन्तु इनके यहां की एक व्यवस्था से मैं समझौता नहीं कर पाई हूं। ग्रामीण जीवन में यथासम्भव सुलभ समस्त सुख-सुविधाओं के बीच में एक अभाव से सदा सहमी रहती हूं। अभी तक इस संबंध में यहां किसी से कुछ कहने का साहस न संजो पाई। यह अभाव मेरे लिए ही नहीं, सभी के लिये है परन्तु अन्य लोग इसमें रहने के इतने अभ्यस्त हो गए हैं कि इसके कारण होने वाली असुविधाओं की ओर उनका ध्यान भी नहीं जाता। परन्तु मेरे भैया मैं इसके भय से इच्छा भर भोजन भी नहीं करती। सदैव यही शंका लगी रहती है कि कहीं इसके कारण मेरी तथा मेरे कारण आप सभी की प्रतिष्ठा पर कोई अंगुली न उठा दें। अपना सर्वप्रिय पकवान

भी सामने होने पर मैं इच्छा भर भोजन नहीं करती। कहीं पेट खराब हो गया तो क्या होगा? मैं कहां जाउंगी, दिन के उजाले में? मुझे बड़ा भय लगता है।'

ऐसा क्यों है, सुशीला। हमने तो हर तरह से सम्पन्न घर-वर देखकर ही तेरा विवाह किया था। शहर की बाहरी तड़क-भड़क यहां भले ही न हो, जीवन की आवश्यक वस्तुओं की कोई कमी नहीं होगी। शायद तुझे गांव का जीवन नहीं भाया, बहन।

ग्राम्य जीवन और अपने घर-वर की ओर से मुझे किसी प्रकार की असुविधा नहीं है, भैया। यहां यदि कोई कष्ट है तो मुझे इस बात का कि प्रातः चार बजे से संध्या के साढ़े सात बजे तक पूरे साढ़े पन्द्रह घण्टे मुझे अपने पाचन संस्थान पर नियंत्रण करना होता है। दिन के समय की पाचन शक्ति ने साथ न दिया तो हमारे लिए घर में कौन कहे, गांव के बाहर भी कहीं कोई सुविधा-पूर्ण स्थान नहीं मिलता। विवश होकर यदि बाहर जाना ही पड़ा तो सास और बहू का साथ देखकर यही लगता है, जैसे कोई मदारिन अपने रीछ को नचाने जा रही हो क्योंकि बहू को कहीं कोई देख न ले उसे सिर से पैर तक चादर लपेट कर हौले-हौले पांव बढ़ाने होते हैं। मैं ही नहीं, सभी नई-पुरानी यहां की बहुएं इस असुविधा से परेशान हैं। बहुयें ही क्यों, यहां की लड़कियां और बहुएं बूढ़ी औरतें भी शौच जाने की अव्यवस्था के कारण कब कैसे निर्लज्जता की स्थिति में आ जाएं, सदैव सशंकित रहती हैं। नित्य सुबह-शाम की इस प्राकृतिक आवश्यकता की पूर्ति के लिए हर एक को एकान्त स्थान तथा निश्चिन्तता की स्थिति अनिवार्य होती है जब कि होता इसके विपरीत है। भैया, मुझे यहां अन्य कोई कष्ट नहीं बस यही एक अभाव सबसे अधिक दुःख दे रहा है।

यह अभाव अब तुझे ही नहीं, तेरी ससुराल के किसी भी व्यक्ति को दुःख न देगा, सुशीला। रेलवे स्टेशन से यहां गांव तक घर आते मुझे रास्ते में यहीं के एक व्यक्ति से मुलाकात हो गई। वह निकट के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में जन स्वास्थ्य रक्षक का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहा है। उसने बताया कि प्रशिक्षण के उपरान्त गांव में रहकर वह गांव वालों की प्राथमिक चिकित्सा संक्रामक रोगों की रोकथाम परिवार कल्याण आदि कार्यों के साथ प्रमुख रूप से गांव में वातावरण की स्वच्छता से सम्बन्धित व्यवस्थाएं करने में उनकी सहायता एवं मार्गदर्शन करेगा। तुम्हारे इस गांव तक मुख्य सड़क से जोड़ने वाले सम्पर्क मार्ग का निर्माण अवश्य हो गया है, परन्तु गांव के निकट उसके दोनों किनारों पर लोगों द्वारा मल त्यागने के कारण बहुत अधिक गन्दगी है। उस पर कौवे, सुअर, कुत्ते यहां तक कि कुपालित दुधारु पशु भी घूमते रहते हैं। जिन गांवों में प्रकृति ने अपने सभी सुख दे रखे हैं, वहीं हम अपनी दुर्व्यवस्था से दुर्गन्ध फैलाए हुए हैं। मक्खियों का प्रजनन भी ऐसे ही गन्दगी वाले स्थानों पर अधिक होता है जो अनेक प्रकार के पेट संबंधी रोगों को फैलाने में सहायक बनती हैं। मैंने स्वास्थ्य रक्षक से इस संबंध में जानकारी चाही तो उसने इसके समाधान के लिए बड़ा सस्ता सरल तथा व्यावहारिक उपाय बताया।

शहरों में प्रयोग किए जा रहे फ्लश शौचालयों की भांति ही गांवों के लिए भी ऐसे शौचालयों की व्यवस्था है जिसमें न तो सफाईकारों की आवश्यकता पड़ती है और न किसी प्रकार की दुर्गन्ध या गन्दगी फैलने की ही आशंका रहती है। जन स्वास्थ्य रक्षक ने अपने घर पर एक ऐसा ही शौचालय अभी कुछ दिन पहले निर्मित करा लिया है। उसका निर्माण कराने में मात्र पचास रुपयों से अधिक नहीं लगते। गांव के पंचायत उद्योग केन्द्र में इसके उपकरणों का निर्माण स्थानीय रूप से करके गांव वालों के लिए आसानी से उपलब्ध भी कराया जा सकता है। इस प्रकार के शौचालय द्वारा मल का विसर्जन जमीन के अन्दर गड्डा अथवा खाई खोद कर किया जाता है जिससे उस तक मक्खी, पशु, चिड़िया आदि नहीं पहुंचतीं तथा उचित प्रकार की खाद भी खेती में प्रयोग के लिए मिल सकती है। सुशीला, मैंने तेरे ससुर जी को जनस्वास्थ्य रक्षक से मिला दिया है। उन्होंने इस घर में दो शौचालय बनवाने के लिए उसके माध्यम से प्रबंध कर लिया है। एक घर की तुम औरतों के लिए और दूसरा अपने लिए। उन्हें स्वयं को भी तो तुम सभी की भांति जाड़ा गर्मी, बरसात हर मौसम में ही शौच जाने की असुविधा रहती है। वह गांव के प्रधान भी तो हैं। स्वयं किसी अच्छे कार्यक्रम को नहीं अपनाएं तो दूसरों से कैसे कहेंगें। गांव के वातावरण को स्वच्छ तथा स्वस्थ रखने की जिम्मेदारी तो गांव पंचायत की ही है। इस ओर गांव के प्रत्येक ग्रामवासी को जागरूक रहना चाहिए। हमारे ग्रामोत्थान के लिए यह परम आवश्यक है।

सुशीला को अपने भैया की बातें सुनकर उस दिन अपनी ससुराल में सर्वाधिक सन्तोष का अनुभव किया था। वस्तुतः शौच जाने की निश्चिन्तता मानव-मात्र के लिए एक सुख सबका है। इसे हम किसी से कहें भले न अनुभव सभी करते हैं। इसके लिए उपयुक्त व्यवस्था होनी ही चाहिए। ●

प्रसार प्रशिक्षण अधिकारी
प्रसार प्रशिक्षण केन्द्र
बख्शी का तालाब
लखनऊ (उ०प्र०)

उर्वरक उद्योग

आत्मनिर्भरता

की ओर

प्रो. डा. एस. एस. अग्रवाल

पाश्चात्य कृषि शास्त्रियों के मतानुसार खेती को अधिकाधिक रासायनिक खाद देकर उत्पादन में आशातीत वृद्धि की जा सकती है। चेस्टर बोल्स का मत है कि खाद के यथेष्ठ प्रयोग से उत्पादन की मात्रा तिगुनी की जा सकती है। भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि का योगदान पचास प्रतिशत है और भविष्य में इसके कम होने की कोई संभावना भी नहीं है। अतः कृषि क्षेत्र का तीव्रगति से विकास करके ही राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना होगा।

सन् 1985 तक जनवृद्धि और खाद्यान्न की आवश्यकता संबंधी जो अनुमान लगाए गए हैं उनके अनुसार पिछले वर्ष के उत्पादन स्तर की तुलना में देश का 247 से 374 लाख टन अधिक खाद्यान्नों की पूर्ति करनी होगी। ऐसा करना उसी समय संभव हो सकता है कि जब हम भूमि-उर्वरता, जल-प्रबन्ध तथा पौध-संरक्षण में निरन्तर सुधार करते रहें। भूमि की उर्वरता में सुधार रासायनिक खाद के प्रयोग से किया जा सकता है।

बढ़ता उपभोग स्तर

भारत में रासायनिक उर्वरकों की खपत निरन्तर बढ़ रही है। अनुकूल मौसम, अधिक उपज देने वाले बीजों के क्षेत्र में वृद्धि, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार तथा खाद के उपभोग को बढ़ाने के लिए किए गए प्रयत्न आदि के फलस्वरूप उर्वरक का प्रयोग बढ़ता जा रहा है। यह एक अच्छी प्रवृत्ति है जिसे तालिका-1 में दर्शाया गया है।

तालिका-1 नाइट्रोजन, फास्फेटिक व पोटाश की खपत

(हजार टन)

वर्ष	कुल मात्रा	नाइट्रोजन	फास्फेटिक	पोटाश
1965-66	7.84	575	132	77
1975-76	28.92	2148	466	278
1978-79	80.00	5200	1800	1000
1983-84	200.00	9600	6200	4200

यद्यपि सन् 1972 से 1975 के मध्य खाद उपभोग में गिरावट आ गई थी परन्तु इसके बाद इसमें आशातीत वृद्धि हुई है। खरीफ के दौरान वास्तविक उपभोग और रबी के लिए किए गए अनुमान के आधार पर ऐसी परिकल्पना है कि इस वर्ष नाइट्रोजन की खपत में 17.5% फास्फेटिक में 20.3% और पोटाश में 19.2% वृद्धि होगी। खाद के कुल उपभोग में 1976-77 में 18% 1977-78 में 26% और 1978-79 में 15% वृद्धि की आशा है।

भारत में रासायनिक खाद का उपयोग अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है जैसा कि तालिका-2 से स्पष्ट है।

तालिका-2

खाद का तुलनात्मक उपभोग

किलोग्राम

देश	प्रति हेक्टेयर	देश	प्रति हेक्टेयर
नीदरलैंड	717	इजराइल	151
बैल्जियम	509	आस्ट्रेलिया	25
जापान	387	कनाडा	24
फ्रांस	280	भारत	16

उत्पादन क्षमता का विस्तार

भारत सरकार इस बात के लिए उत्सुक है कि आगामी दस वर्षों में रासायनिक खाद के मामले में आत्म-निर्भरता प्राप्त करली जाए। इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु सरकार ने आगामी पांच वर्षों में उर्वरक क्षेत्र में विनियोग मात्रा 400 करोड़ रु० से बढ़ाकर 7000 करोड़ रु० कर दी है ताकि 70 लाख टन अतिरिक्त उर्वरक उत्पादन क्षमता का विकास हो सके। चार बड़े आकार के उर्वरक संयंत्रों की स्थापना की स्वीकृति सरकार ने दे दी है। इनमें एक बम्बई क्षेत्र में मिलने वाली गैस पर आधारित पश्चिमी तटपर और दूसरा गैस पर आधारित आसाम में स्थापित किया जाएगा। 1982-83 में नाइट्रोजन और फास्फेट की उत्पादन क्षमता बढ़ कर क्रमशः 61 लाख टन और 14.36 लाख टन हो जाएगी। छठी पंचवर्षीय योजना काल में इन दोनों की क्षमता में वृद्धि क्रमशः 19 लाख टन और 8.8 लाख टन हो जाने का अनुमान है।

उत्पादन क्षमता में की जा रही वृद्धि उर्वरक की मांग को पूरा करने में समर्थ नहीं होगी। इस प्रकार उत्पादन और मांग में अन्तर बना रहेगा। 1978-79 में पोषक तत्वों की मांग 48 लाख टन और 1983-84 में 70 लाख टन होने का अनुमान है। पिछले उपभोग के आधार पर उर्वरक की मांग 1986 में 5.25 मी० टन व 2001 में 8.37 मी० टन हो जाएगी जबकि देश में खाद्यान्न की मांग 148 मी० टन और 2001 में 194 मी० टन होगी। खाद्यान्नों के लिए उर्वरकों की मांग 1986 व 2001 में 9.6 मी० टन और 15.6 मी० टन होगी। राष्ट्रीय कृषि आयोग का मत है कि सन् 2000 में उर्वरक का उपयोग 14 से 16 मी० टन होगा। देश में प्रति व्यक्ति खाद उपभोग के आधार पर 1986 में खाद की मांग 12.85 मी० टन और 2001 में 16.54 मी० टन हो जाएगी इस अवधि में जनसंख्या क्रमशः 73 करोड़ 40 लाख व 90 करोड़ 46 लाख हो जाएगी। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए 2001 में

खाद्यान्न का उत्पादन 194 मी० टन करना होगा जो कि गहन कृषि एवं उन्नत [illegible] के खाद के प्रयोग द्वारा ही संभव हो सकता है। खाद के उत्पादन और उपयोग में जो अन्तर है उसे तालिका–3 में दिखाया गया है।

तालिका–3

खाद के उत्पादन व उपयोग में अन्तर

हजार टन

वर्ष	उत्पादन	उपयोग
1952-53	61	66
1955-56	92	131
1960-61	150	294
1965-66	344	784
1970-71	1073	2256
1974-75	1597	2579
1977-78	4700	4285
1987-88	5980	8500

इस अन्तर को पूरा करने के लिए सरकार को उर्वरकों का आयात करना पड़ता है और वित्तीय साधनों पर विदेशी मुद्रा का बोझ बढ़ जाता है। 1977-78 में लगभग 30 लाख टन उर्वरकों का आयात किया गया। इस समय इसके आयात पर लगभग 500 करोड़ रु० व्यय किए गए और 200 करोड़ रु० सहायतार्थ व्यय करने पड़े। चूंकि विदेशों में उर्वरकों की कीमतों में काफी वृद्धि हो रही है, इसलिए भारत को इनके आयात पर और अधिक धन खर्च करना पड़ेगा। इसलिए आयात पर निर्भरता एक महंगा सौदा है जिसे शीघ्र ही समाप्त करना चाहिए।

भारत में उर्वरकों का जो उत्पादन कम हो रहा है उसका एक मुख्य कारण वर्तमान क्षमता का पूर्ण उपयोग न होना है। इस समय नाइट्रोजन के लिए 65% और फास्फेटिक उर्वरक के लिए उत्पादन क्षमता का 60% उपयोग हो पा रहा है। यदि उत्पादन क्षमता का 75% भाग का उपयोग होने लगे तो 3.50 लाख टन अतिरिक्त उर्वरकों की प्राप्ति हो सकेगी। पूंजी प्रधान उर्वरक उद्योग अपनी उत्पादन क्षमता का सर्वोत्तम प्रयोग नहीं कर पा रहा है, यह बड़े दुख की बात है। उर्वरक उद्योग इस असफलता का दोष बिजली पूर्ति की अनियमितता को देता है। बिजली न मिलने के कारण और रुक-रुक कर मिलने [illegible] संयंत्रों को भी हानि पहुंचती है और उर्वरक उत्पादन में प्रयोग आने वाले अन्य रसायनों की भी हानि होती है।

सरकार ने इस समस्या के समाधान हेतु उद्योग को अपने 'कोपरेटिव पावर प्लांट' लगाने की अनुमति दी है। परन्तु यह व्यवस्था बहुत महंगी है जिससे उर्वरकों की उत्पादन लागत और बढ़ जाएगी, एक बहुत बड़ी धनराशि का प्रवाह रुक जाएगा और इन प्लान्टों के बन्द होने पर इस उद्योग को कहां से बिजली की पूर्ति होगी। यह प्रश्न ऐसे हैं जिनका समाधान किया जाना है।

एक उल्लेखनीय बात यह भी है कि उर्वरक उद्योग की कार्यक्षमता में वृद्धि करने के अन्य उपाय भी कारगर सिद्ध हो सकते हैं। यह उद्योग यदि अपने संयंत्रों के रखरखाव के स्तर को सुधारे तो भी उत्पादन में काफी वृद्धि हो सकती है। उन्हें तकनीक का भी अविष्कार करना होगा जिस पर बिजली की कम बढ़त का प्रभाव कम हो जाए। इसके लिए उन्हें अपने कर्मचारियों के तकनीकी ज्ञान के स्तर को उठाना होगा।

इस संदर्भ में एक बात आवश्यक है कि देश को उर्वरकों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए देशी वस्तुओं का प्रयोग करने पर बल दिया जाना चाहिए।

'फीड स्टाक' पूर्णतया देशी होना चाहिए। सरकार ने भी इस दिशा में सोचना शुरू कर दिया है। हाल ही में भारत में जो प्राकृतिक गैस के क्षेत्रों की खोज ने इस विचार को बहुत बल दिया है। आशा है कि भविष्य में प्राकृतिक गैस का प्रयोग करके रासायनिक खाद का उत्पादन किया जायेगा। इससे उत्पादन लागत काफी कम हो जाएगी और विदेशों पर निर्भरता कम होगी।

भारत का उर्वरक क्षेत्र में दस वर्षों में आत्म-निर्भरता प्राप्त करने का स्वप्न उसी समय साकार होगा जब बिजली की पूर्ति निरन्तर जारी रहे, उद्योग, अपने यंत्रों के रख-रखाव के स्तर को ऊंचा उठाएं और तकनीकी ज्ञान के स्तर को परिस्थितियों के अनुसार बनाने का प्रयत्न करें।

अध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग
लाजपत राय कालेज,
एच-9, नवीन शाहदरा,
दिल्ली-110032.

किसान

चिन्ता फसल की रहती है तुमको हरदम,
गर्मी हो या बारिश या जाड़े का हो मौसम।
बेरा जीना मरना है खेतों को ही लेकर,
करते हो आबाद अपनी सुध-बुध खोकर।
फुर्सत न मिलती है कभी मारने की दम।
तेरे साथ जुड़ी है खेतों की हरियाली
देश की टिकी है तुझी पे खुशहाली।
होता है प्रभावी तुम्हारा हर इक कदम।
सूखा तेरा साथी और बाढ़ तेरा मितवा,
पुरबा और पछबा लगाती तोसे गरवा
खिजा और बहार तेरे लिये है बेमौसम।
रातें तेरी कटती हैं खेतों में मचान पे,
फसल बचाने को खेल जाते जान पे
तुमसे उजाला है और हुआ दूर तम।

शशिधर खां

पहला सुख निरोगी काया

विसूचिका (हैजा) के लक्षण एवं चिकित्सा

* वैद्य रघुनंदन प्रसाद साहू

ग्रीष्म ऋतु में मनुष्य सूर्य की प्रचण्ड गर्मी से राहत पाने के लिए ठंडे पानी, बर्फ का पानी, आइसक्रीम तथा बहुत ही ठंडा खाना पसन्द करते हैं। यदि इनका एक निश्चितमात्रा में और अदूषित रूप से सेवन करें तो यह शरीर के लिए हितकारी हैं। पर इनका मात्रा से अधिक सेवन करने से ये ठंडी वस्तुएं हमारी पाचकसिन को दूषित कर देती हैं। परिणामस्वरूप अपचजन्य व्याधियां मनुष्य को ग्रसित कर लेती हैं। इसी तरह वातावरण में अत्यधिक गर्मी के कारण हमारा पका-पकाया भोजन भी अधिक देर तक रखने से दूषित हो जाता है। इस दूषित भोजन के सेवन से भी मनुष्य पाचन सम्बन्धी अनेक व्याधियों का शिकार हो जाता है। इनमें से हैजा भी एक है।

लक्षण

हैजा का प्रथम और प्रमुख लक्षण अतिसार अर्थात् बार-बार पाखाना आना है। इसमें रोगी बहुत ही पतला चावल के मांड के समान और अधिक मात्रा में तथा बार-बार टट्टी करता है।

2. वमन:—हैजे का दूसरा प्रधान लक्षण वमन है। इसमें रोगी का खाया हुआ भोजन ऊपर मुख के मार्ग से बाहर निकलता है। पहले तो इसमें बिना पचा हुआ भोजन ही बाहर आता है, पर जब वह समाप्त हो जाता है तो शरीर का रक्तमांसाश्रित तरल पदार्थ ही बाहर आने लगता है।

3. मूर्च्छा:—हैजे का तीसरा और प्रधान लक्षण मूर्छा है। अतिसार और वमन की बहुलता के कारण रोगी के शरीर का बल घटने से रोगी मूर्च्छित हो जाता है।

4. प्यास:—हैजे का चौथा लक्षण है अत्यधिक प्यास का लगना। यह लक्षण भी ऐसा भयंकर है जो रोग को घटाने के बदले और भी बढ़ाता है। अत्यधिक प्यास के कारण रोगी अत्यधिक पानी पीता है जोकि शारीरिक अग्नि के मंद होने के कारण पुन: अतिसार और वमन के रूप में बाहर आता है जिससे रोगी और भी परेशान हो जाता है।

5. शूल:—हैजे का पांचवां लक्षण है शूल। रोगी के सारे शरीर में सूई चूभोने के समान पीड़ा होती है। अत: प्राचीन ग्रंथों में यह विसूचिका रोग के नाम से जाना जाता है।

6. भ्रम:—हैजे का छठा लक्षण है भ्रम। अर्थात् सिर में चक्कर आना वमन और अतिसार के कारण मस्तिष्क में रक्त का प्रवाह रुक जाता है। अत: रोगी को चक्कर आने लगते हैं।

7. ऐंठन:— हैजे का सातवां लक्षण है ऐंठन। शरीर की दुर्बलता धीरे-धीरे इतनी बढ़ जाती है कि शरीर के नाड़ी मंडल पर इसका प्रभाव पड़ने लगता है। नाड़ी संस्थान को रस-रक्त न मिलने से उसमें ऐंठन प्रारम्भ हो जाती है।

8. जम्हाई:—शारीरिक धातुओं के अत्यधिक ह्रास के कारण बात प्रकुपित हो जाती है। फलस्वरूप रोगी बार-बार जम्हाई लेने लगता है। पित्त बढ़ने के फलस्वरूप रोगी दाह की अनुभूति करने लगता है। रोगी का रंग-रूप बदल जाता है। कंपकपी का कारण होता है रोगी को अधिक शीतल पेय देना।

हृदय प्रदेश में पीड़ा:—रस-रक्त की कमी के कारण रोगी के हृदय में प्राण वायु का संचार नहीं होता है तो हृदय प्रदेश में दर्द अनुभव करने लगता है। इसी कारण सिर में भी दर्द होने लगता है।

उपरोक्त लक्षणों को देखते ही समझ लेना चाहिए कि रोगी को हैजा हो गया है। अत: उसकी निम्नलिखित औषधि से चिकित्सा करनी चाहिए।

1. प्याज का रस :— प्याज प्राय: सभी घरों में उपलब्ध होती है। अत: प्याज को अच्छी तरह छील कर पीसकर उसका रस निचोड़ लें और रोगी को एक-एक चम्मच की मात्रा में बराबर देते रहें तो उसे हैजे से मुक्ति मिल सकती है।

2. कच्चे नारियल का जाम : कच्चे नारियल का जाम जो कि लवणयुक्त होता है हैजे के लिए रामबाण, है। इसे चम्मच भर लगातार देते रहने से रोगी की प्यास मिट जाती है तथा धीरे-धीरे अतिसार और वमन भी बन्द हो जाते हैं।

3. अर्क पुदीना : हैजे की बीमारी में पुदीने का अर्क भी रामबाण है। इसे चम्मच भर पानी या बतासे में 10-15 बूंद डालकर देने से अतिसार और वमन शीघ्र दूर हो जाते हैं।

4. अमृतधारा:—हैजे के लिए 'अमृतधारा' नामक औषधि भी रामबाण है। यह पीपरमिंट, अजवायन, और कपूर के सत को एक साथ समान मात्रा में मिलाकर बनाई जाती है। इसको भी अर्क पुदीने की तरह पानी या बतासे में मिलाकर देने से शीघ्र ही हैजे से छुटकारा मिल जाता है।

5. कर्पूरासव:—हैजे के लिए कर्पूर के सत् को मिला कर एक आसव भी बना बनाया हुआ मिलता है। इसको 10-15 बूंद की मात्रा में एक चम्मच भर पानी

मैं घंटे-घंटे बाद पिलाने से हैजे की सभी अवस्थाओं में आशातीत लाभ मिलता है।

6. संजीवनी वटी:— 1 संजीवनी गोली एवं कर्पूर रस की एक गोली एक साथ पीस कर मधु के साथ चटाने से भी हैजा शांतिया दूर हो जाता है।

7. हेम गर्भपोटली रस:— इस रस की एक रत्ती तथा शंखोदर रस की एक रत्ती मिलाकर पीसकर मधु से देने पर हैजा में निश्चित फायदा होता है।

8. हर्रे, बच, हींग, इन्द्रजौ, लहसुन सौवर्चल लवण, इन सबको चूर्ण बनाकर गर्म पानी के साथ लेने से भी हैजा दूर हो जाता है।

9. कूट, धान का लावा, कमल गट्टा की कोमल जटा और मुलहटी को शहद में मिलाकर बनाई हुई गोली को मुंह में रखने से जल्दी ही प्यास दूर हो जाती है।

10. बड़ी इलायची, धान का लावा और लौंग नागकेशर, पीपल, प्रियंगु, बेर की गुठली नागरमोथा; और सफेद चन्दन का चूर्ण मधु और मिस्री से लेने पर भी हैजे का वमन शान्त हो जाता है।

11. करंज का फल, हल्दी, दारूहल्दी, इनके बराबर बिजोड़े की जड़ इनको पानी में पीस कर गोलियां बनाकर छाया में सुखा लेने से इन की गोलियां बनाएं। इनका अंजन करने से हैजे की मूर्छा दूर होती है। ✱

मौसमी बुखार और उसका उपचार ✱

डा० बी० पी० मिश्र

मौसम बदलने पर शरीर पर इसका असर पड़ता है और लोग ज्वर से पीड़ित होते हैं। साधारण ज्वर जैसे इन्फ्लूएन्जा आदि का संक्षिप्त इलाज नीचे दिया जा रहा है।

बैप्टीसिया :—(मूलअर्क) ज्वर के आरम्भ होते ही 5 बूंद थोड़े से पानी में मिलाकर 4 घण्टे के अन्तर से लेना आरम्भ कर दें। शरीर में दर्द, सिर में दर्द, बेचैनी, गले में दर्द आदि इसके लक्षण रहेंगे।

यूपैटोरिमपर्फ-6 :—दो घंटे के अन्तर से दें। इसमें पूरे शरीर म तेज दर्द होता है। ऐसा लगता है जैसे हड्डियां टूट जाएंगी। दर्द के कारण बेचैनी।

ब्रायोनिया-6 :—सिर में तेज दर्द। दबाने से दर्द में आराम। हिलने डुलने से सिर में दर्द का बढ़ जाना। प्यास काफी तेज। पानी की मात्रा अधिक पीना। कब्जियत जीभ पर सफेद मैल।

सिमीसिफ्यूगा-6 :—आंखों में दर्द या आंखों के पीछे दर्द, मांसपेशियों में तेज दर्द, रात में बेचैनी अधिक।

बेलाडोना-6 :—टीस मारने वाला सिर में दर्द, गले में खरास, सूखी खांसी, शरीर गर्म, शरीर थोड़ा-थोड़ा गीला।

जेल्सीमियम-6 :—रोगी चुपचाप पड़ा रहता है। सुस्त, बोलना चालना नहीं चाहता।

नक्सवोमिका-200 :—बदन में दर्द के अलावा ठंडक महसूस करना। शरीर को ढक कर रखने की इच्छा, चिड़चिड़ापन, कब्जियत।

ग्लोनाइन :—तेज धूप चलकर आने के कारण बुखार लग जाय। सिर में तेज दर्द, बुखार काफी तेज हो। 2 घंटे के अन्तर से लें।

एन्टिमक्रूड :—जीभ पर सफेद गहरी मैल गर्म ऋतु में होने वाला बुखार।

अन्य उपचार :—तेज बुखार होने पर ठंडे पानी से सिर धो देना चाहिए। बदन को चादर कम्बल से ढक कर नहीं रखना चाहिए। साथ ही ठंडे पानी की पट्टी करते रहना चाहिए। हवादार कमरे में रोगी को रखना चाहिए। पानी का एवं तरल पदार्थ का अधिक सेवन कराते रहना चाहिए ताकि अधिक पेशाब होता रहे। रोज शरीर को, ठंडे पानी में कपड़ा भिगोकर पोंछ देना चाहिए। ✱

डी-770, मन्दिर मार्ग,
नई दिल्ली-110001

एक अच्छा आदमी बनने के लिए सबसे बढ़िया नुस्खा यह है कि मन और तन स्वस्थ रखा जाए

सम्पूर्ण गांधी वाङ्मय – 68वाँ खण्ड - संस्करण, जुलाई 1977–प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली–पृष्ठ 532–मूल्य – साढ़े सात रुपये ।

भारत सरकार द्वारा 74 खण्डों में गांधी वाङमय का प्रकाशन एक महत्वपूर्ण घटना है । गांधी जी की विचारधारा, उनका व्यक्तिगत दैनन्दिन जीवन और व्यवहार हमारे सम्मुख स्पष्ट रूप से उभर कर आता है । पत्रों द्वारा उनका ममत्व, भ्रातृत्व और निस्पृहता, निर्भीकता का भलीभांति उद्घाटन होता है । विभिन्न लेखों और भाषणों के द्वारा हम जान सकते हैं कि उनकी हिंसा और अहिंसा की परिभाषाएं क्या थीं । वे किसी पर किसी वस्तु को थोपने में विश्वास नहीं रखते । खण्ड की यह भी विशेषता है कि कांग्रेस की तत्कालीन गतिविधियों एवं देशोद्धार की राजनीतिक चर्चाओं का भी हवाला देता है । गांधी जी का ब्रह्मचर्य जीवन, दृढ़ विश्वास, अनासक्ति और वीतराग का परिचय भी मीरा बहन को लिखे अनेक पत्रों से हो जाता है । वे अपना कार्य अत्यन्त लगन और विश्वास के साथ करते थे । भूमि-सुधार एवं जमींदारी प्रथा को सुधारने में गांधी जी का निरन्तर प्रयत्न रहता था ।

गांधी जी के पत्रों से पता चलता है कि वे दूसरों के कष्टों को कितनी तत्परता से दूर करने का प्रयत्न करते थे और अपने कष्टों एवं व्यथाओं की छाया तक भी दूसरों पर नहीं पड़ने देते थे । ऐसा नहीं कि उन पर कष्ट न आए हों, उन्हें जब भी मानसिक, शारीरिक एवं अन्य प्रकार की विपत्ति का सामना करना पड़ता था, परन्तु इसकी सूचना उनके निवारण के पश्चात् देते थे । गांधी जी का अटूट देश प्रेम, राजनीतिक विचारधारा निर्णय-शक्ति, एवं आत्मविश्वास हमें इस पुस्तक के विभिन्न स्तम्भों से मिल जाएंगे । अमृतकौर को लिखे पत्रों से उनका अपनत्व व बालपन स्पष्ट झलकता है । उनकी पत्र-शैली और भाषण-कला में नाटकीयता एवं स्पष्ट-वादिता का प्राधान्य है । वे अपने किसी भी मित्र और सहयोगी को खो देना नहीं चाहते थे । आपसी ईर्ष्या-द्वेष को दूर करने में सतत प्रयत्नशील रहते थे ।

ईश्वर पर गांधी जी का अटूट विश्वास था । हरिजन-उद्धार अछूत-समस्या, मानववाद एवं अहिंसा और स्त्री-सुरक्षा आदि संदर्भों में गांधी जी अद्वितीय थे । इस खंड को पढ़कर हम गांधी जी के अद्भुत सिद्धांतों और विचारधाराओं से भलीभांति अवगत हो जाते हैं । गांधीवाद के शोधकर्त्ताओं एवं इतिहासज्ञों के लिए इस वाङ्मय का प्रकाशन अनिवार्यतः एवं तथ्यात्मक रूप में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा । इतने बृहदाकार में भी अत्यल्प मूल्य में इसे उपलब्ध करना भारत सरकार का जनसाधारण के प्रति आर्थिक दृष्टिकोण भी बधाई का विषय है । अस्तु, वाङ्मय की विभिन्न दृष्टियों से वास्तविक उपयोगिता अक्षुण्ण है ।

दिनेश कुमार गुप्ता,
हिन्दी-विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय,
दिल्ली-110007

जागृति वार्षिकांक-1978, प्रकाशक : खादी और ग्रामोद्योग कमीशन, बम्बई, पृष्ठ संख्या : 55, मूल्य : 2.00 रु० ।

प्रस्तुत विशेषांक में ग्रामोन्नयन एवं खादी के विपणन की समस्याओं पर सम्पादकीय सहित चौदह विशिष्ट लेखों में राष्ट्र के प्रमुख समाज सेवी विचारकों व लेखकों की चिन्तन सामग्री प्रस्तुत की गई है । इस संदर्भ में सर्वश्री रति भाई गोधिया, दामोदर वी० पांगरेकर, रवीन्द्र उपाध्याय, हेमन्त कुमार घोषाल, डी० वी० राघवुलु, श्री टी० पेरीयनाथन, दर्शन सिंह तथा बी० बी० जोशी के लेख महत्वपूर्ण हैं । पंचायती सुधार पर श्री अशोक मेहता का लेख विशेष रूप से उल्लेखनीय है । कताई और पावरलूम पर श्री द्वारकानाथ विलेते का विशेष लेख है ।

कुल मिलाकर ग्रामीण विकास तथा पिछड़ी जन जातियों के आर्थिक उत्थान की दृष्टि से कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहन देकर ग्रामीण अंचलीय समाज को आत्म-निर्भर बनाने के लिए प्रेरित करना ही इस विशेषांक का सर्वोदीय लक्ष्य है ।

मोहन चन्द्र मण्टन

डायरी बोलती है : लेखक : ईलिल चन्द्र - प्रकाशक : प्रतीति प्रकाशन, लखनऊ, पृष्ठ संख्या : 60, मूल्य : 8 रु०

"डायरी बोलती है" स्वर्गीय ईलिल चन्द्र की 20वीं वर्ष-गांठ के अवसर पर उनके पिता की करुण भेंट के रूप में प्रकाशित हमारे आसपास के समाज की अव्यवस्थाओं पर करारे व्यंग्य की 20 ऐसी कहानियों का अनुपम संग्रह है जिनका प्रत्येक शब्द साहित्य की वेदी पर शहीद कलम के उस अमर सिपाही की एक ऐसी यादगार है, जो साहित्य के इतिहास में सदा अक्षुण्ण रहेगी । इतनी कम उम्र में उसकी कहानियों में जो प्रतिभा झलकती है उसे देखकर अहसास होता है कि यदि दैव ने उसकी

आयु का पूर्ण समय दिया होता तो हिन्दी साहित्याकाश में यह नक्षत्र सचमुच काफी देर तक जगमगाता रहता और पाठकों को न जाने कैसी-कैसी प्रबुद्ध रचनाएं पढ़ने के लिए मिलती, मगर नियति को शायद यह मंजूर न था।

संग्रह की कहानियों में से "जब गणेश जी" में गणेश जी के हार्ट अटैक के बहाने मुनाफा खोरी, "जैसे को तैसा" में सीमेंट की दुर्लभता और उसकी चोर बाजारी, "खोटा सिक्का" में अमीरों पर तथा "तीसरी खाट" में वोट की महिमा पर कटु व्यंग्य किया है। "तुरुप चाल" में झपताल "कद्दू उस्ताद" में ऐलिफेंटा पैंट, "बुरे फंसे" में पिददन मियां, "आराम हराम" में चरण दास उर्फ लोटनदास तथा "एबाउट टर्न" में अकबर की मूंछों और "बाहरी सूझ" में गणेश जी की सूंड "नकल से अकल" म भालू कालू, "इमरजेंसी की शिकार एक पालतू बिल्ली" में शिक्षार्थी लाल उर्फ शिकायती लाल के माध्यम से भरपूर हास्य की रचना की है। इनके अतिरिक्त, संग्रह में "सिक्कों का चमत्कार", "उसकी वापसी", "सुबह का भूला", "अपना अपना महत्व", "बुद्धि बल" "सेर का सवा सेर", जैसी सार्थक, सोद्देश्य ज्ञानवर्द्धक तथा उपयोगी कहानियां भी हैं। "डायरी बोलती है" शीर्षक कहानी में अमित का चरित्र काफी प्रभावित करता है जबकि "ज्योतिष का चक्कर" में न केवल सम्पूर्ण कहानी का बोध होता है बल्कि लेखक की बहुआयामी परिपक्वता और वह भी 20 वर्ष की कम उम्र में, चकित कर देती है। लेखक को अमृत लाल नागर, श्रीनारायण चतुर्वेदी, भगवती चरण वर्मा, श्री लाल शुक्ल, के० पी० सक्सेना, डा० श्याम सिंह शशि तथा रामावतार चेतन जैसे महान साहित्यकारों ने स्नेहांजलि अर्पित कर यह आशा और कामना की है कि स्वर्गीय ईलिल चन्द्र निश्चय ही "इस संग्रह की कहानियों के माध्यम से सदैव हमारे बीच रहेंगे।

हनुमान प्रसाद शर्मा,
2023 गली बर्फ वाली,
किनारी बाजार,
चांदनी चौक,
दिल्ली-110006।

कुरूक्षेत्र के बारे में पाठक की राय

"कुरुक्षेत्र" फरवरी, 1979 का अंक प्राप्त हुआ। 'ऊसर भूमि का सुधार कीजिए', 'नगरों पर निर्भर गांवों की अर्थव्यवस्था', तथा 'ग्रामों के विकास में विद्युतीकरण' आदि ऐसे लेख हैं जो बनते हुए नए भारत का परिचय देते हैं। वास्तव में देश के ग्रामों में बहुत परिवर्तन हुए हैं। ऐसे परिवर्तन जिनसे गांवों का रूप सजा है, संवरा है और लोगों के रहन-सहन, खानपान, पहिनाव और आदतों में परिवर्तन हुआ है। अब गांवों के लोग अपने स्वास्थ्य, अपने रोजगारों और अपने पशुओं के रख रखाव में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने लगे हैं। 'छोटे परिवार' के सामाजिक और आर्थिक पहलू को समझने लगे हैं और उनके इस प्रकार के आचरण में उनका शिक्षित होना सहयोगी बन रहा है।

'कुरुक्षेत्र' ग्रामीणों में हो रहे इन परिवर्तनों की परिचायक और प्रेरक पत्रिका है। इसमें प्रकाशित विषय सामग्री न केवल वैज्ञानिक होती है बल्कि व्यवहारिक और सरल होती है। कृपया फलों और सब्जियों की नई किस्में और उन्नत किस्म की शीघ्र फल देने वाली पौध का परिचय प्रकाशित करें ताकि देश में फलों और सब्जियों का उत्पादन बढ़ा कर कुपोषण की समस्या हल की जा सके। सब्जियों को सड़ने से बचाने एवं रख रखाव के वैज्ञानिक किन्तु घरेलू विधियों को भी स्थान दें।

आपके प्रयत्नों की सफलता के लिए हार्दिक शुभकामनाएं।

चुन्नीलाल सलूजा,
संजीव सदन,
फिजीकल कालेज रोड़,
शिवपुरी (म० प्र०)

दहेज प्रथा ... [पृष्ठ 22 का शेषांश]

जहां वो आज मुण्डन संस्कार, नामकरण संस्कार और मृत्य भोज जैसी कुरुतियों को छोड़ते जा रहे हैं वहां इस भयंकर समाज विरोधी कुरीति को भी अखिरी सलाम करें। तभी उन्नति है और तब ही 'जीवन स्तर ऊंचा उठ सकता है।

अनेक जातीय और धार्मिक समुदाय इस कार्य में जहां प्रचार कार्य में जुटे हैं वहां हमारे राष्ट्रीय नेताओं का भी कर्तव्य है कि समाज के इस भयंकर कोढ़ को समूल नष्ट करें। कानून से नहीं बल्कि कारगर प्रचार द्वारा हृदय परिवर्तन पर जोर दें। शिक्षित युवक और युवतियां कदम बढ़ा कर इस कुरीति का बहिष्कार करें। तब ही हमारा अधिकांश अनपढ़ ग्रामीण समाज उनसे प्रेरणा ले सकेगा। हमारे धार्मिक ग्रन्थों की वह 'अमर वाणी' आज भी हमें प्रेरित करती है कि 'विवाह शादी' तो उसी लोक में तय हो जाते हैं धरती के लोग तो उन्हें केवल सम्पन्न करते हैं।

कलंजरी
जानी मेरठ (उ० प्र०)

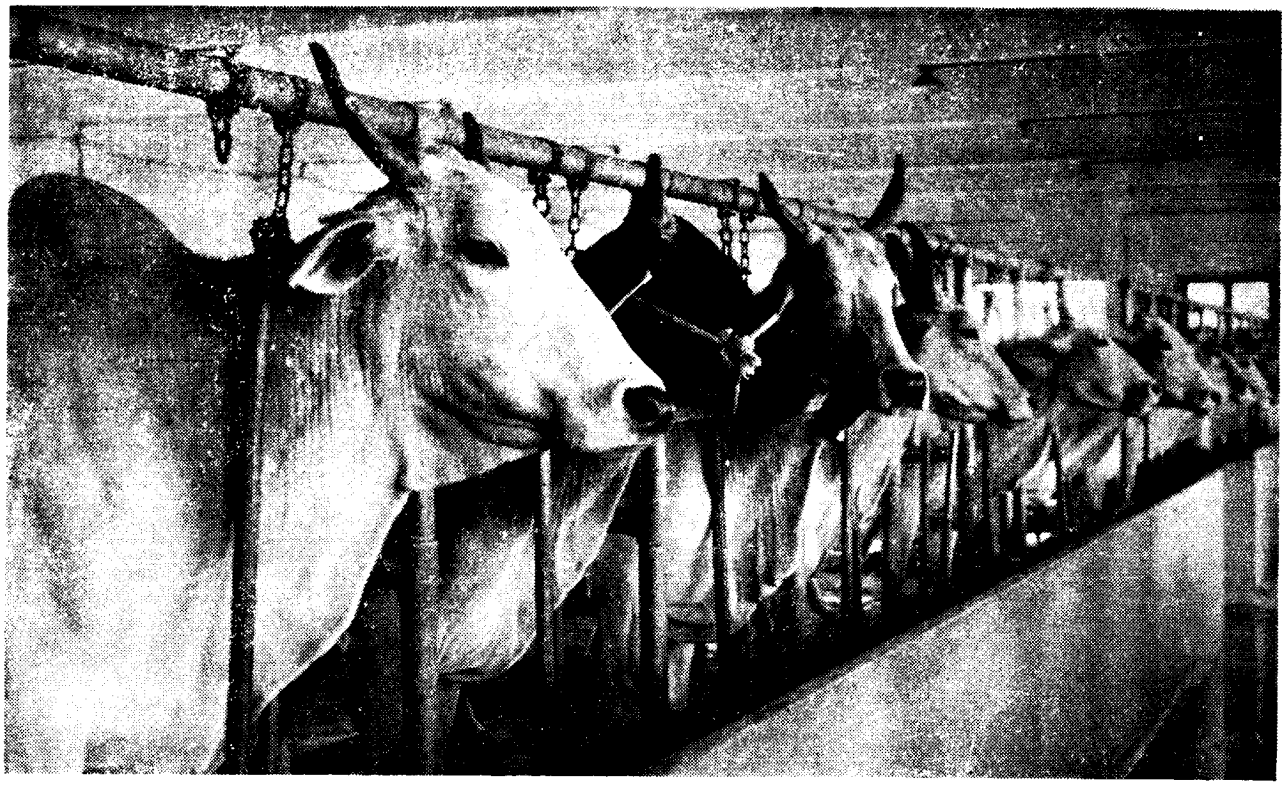

दूध उत्पादन के लिए समुचित पशु-पालन आवश्यक

राम सरूप कपूर और डा० टी० एस० सोहल

संसार के 12 करोड़ 4 लाख पशुओं में 2 करोड़ 5 लाख पशु अकेले भारत में पाले जाते हैं। इतना होने पर भी भारत में प्रति व्यक्ति केवल 115 ग्राम ही दूध मिल पाता है जो कि बहुत ही कम है। प्रति व्यक्ति दूध की मात्रा को बढ़ाने के लिए पशु पालकों को चाहिए कि वह निम्न बातों पर ध्यान दें। ऐसा करने से ही दूध की समस्या तो हल होगी ही, साथ ही लाभ भी अधिक होगा।

पशु पालकों को चाहिए कि वे अपने फार्म पर अधिक दुधारू पशु पालें। अधिक दुधारू पशु वे होते हैं जो शीघ्र (30 मास की आयु तक) प्रौढ़ हो जाए, ब्यांत अन्तर कम (13–15 मास) हो, लगभग 10 मास दूध देते हों और 2–3 मास सूख हों, कम से कम 3–4 मास लगभग 10 किलो दूध देने वाले हों। इस प्रकार के पशु केवल संकर, होली-स्टिन तथा अन्य अच्छी नस्ल के देशी विदेशी पशु होते हैं।

यदि पशु पालकों के पास कम दुधारू पशु हों तो वे अपने पशुओं को शुद्ध विदेशी सांड द्वारा गाभिन कराकर उसकी नस्ल सुधार सकते हैं।

हरा चारा खिलाएं

अधिक दूध और लाभ कमाने हेतु पशु पालकों को चाहिए कि वे अपने पशुओं को मंहगे रातिब न खिला कर हरा चारा ही खिलाएं (ऐसा करने से पशु न केवल अधिक दूध देगा बल्कि दूध पर लागत भी कम आएगी) प्रति दिन प्रति पशु 40–50 किलोग्राम हरा चारा पर्याप्त है।

सस्ते संतुलित रातिब

पशुओं को मंहगे रातिब मिश्रण खिलाने की बजाए सस्ते रातिब मिश्रण खिलाएं। रातिब मिश्रण खिलाने से पशु के दूध में चिकनाई अधिक हो जाती है। सस्ते रातिब मिश्रण के कुछ नमूने निम्न-लिखित हैं:—

(1)	गेहूं का चोकर	50 प्रतिशत
	सरसों की खली	30 प्रतिशत
	अनाज की चुन्नी	20 प्रतिशत
(2)	अलसी की खली	35 प्रतिशत
	अनाज की चुन्नी	40 प्रतिशत
	गेहूं का चोकर	25 प्रतिशत
(3)	बिनौलों की खली	20 प्रतिशत
	मूंगफली की खली	15 प्रतिशत
	चने का छिलका	15 प्रतिशत
	गेहूं का चोकर	15 प्रतिशत
	अनाज की चुन्नी	35 प्रतिशत

उपरोक्त रातिब मिश्रण काफी सस्ते हैं और इसको खिलाने से अधिक खर्चा भी नहीं पड़ता।

भूसे का प्रयोग कम करें

पशु पालकों को चाहिए कि वे अपने पशु को भूसा कम ही खिलाएं क्योंकि एक तो भूसे में धूल मिट्टी भरी रहती है और दूसरा भूसा काफी सख्त भी होता है। इस प्रकार यदि पशुओं को भूसा खिलाने से पशु के मुंह में या तो छाले पड़ जाएंगे या पशु बीमार पड़ जाएगा।

यदि पशुपालक पशुओं को भूसा खिलाना भी चाहें तो भूसे को अच्छी तरह से साफ करें जिससे भूसे पर जमी धूल मिट्टी उतर जाए और भूसा भी नरम हो जाए।

पशुओं के लिए खुला आवास

पशु पालकों को चाहिए कि अपने पशुओं के लिए खुला आवास बनाए क्योंकि खुली जगह में पशु आसानी से रह सकता है। पशु को बांधना भी नहीं चाहिए क्योंकि बांधने से पशु चिड़चिड़ा हो जाता है। पशु शाला में पशु के लिए चारे पानी की व्यवस्था अच्छी तरह से होनी चाहिए। सर्दियों में पशुओं के लिए अलग से आवास की आवश्यकता नहीं। कई पशुपालकों का कहना है कि खुले आवास में पशु सर्दी लगने से बीमार पड़ जाता है, उनकी यह धारणा सही नहीं है, क्योंकि संस्थानों द्वारा खोज की जा चुकी है कि 6 मास से ऊपर वाले पशु में सर्दी सहन करने की क्षमता होती है।

पशुओं का पालन पोषण सुनिश्चित करना

पशुओं का पालन पोषण प्रयोगों द्वारा निकाले गए निष्कर्षों के आधार पर करना चाहिए, जो निम्नलिखित हैं:—

(क) पशुओं के प्रजनन के पश्चात् 60 दिन का आराम करना आवश्यक है।

(ख) प्रजनन के पश्चात् 60—90 दिन तक गाभिन करवाना

(ग) गाभिन के 90 दिन पश्चात् पशु चिकित्सक द्वारा जांच करवाना

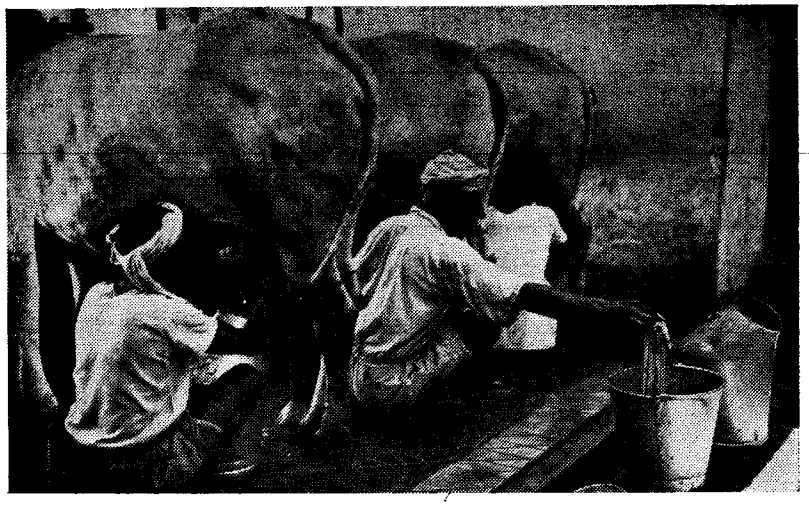

रोगरोधक दवाइयों का प्रयोग

पशुओं को यथासमय रोगरोधक दवाइयों का प्रयोग करना आवश्यक है।

कुछ रोग रोधक दवाइयां निम्नलिखित हैं :—

(क) जून में एच० एस०

(ख) फरवरी में एफ० एम० डी०

इनके साथ पशुओं को पशु चिकित्सक द्वारा निरीक्षण करवा कर रोग रोधक दवाइयों का प्रयोग करें।

बछड़ा पालन

बछड़ा पालन में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए:—

शीघ्र खीस पिलाना

पशु के नवजात बछड़ी-बछड़े को शीघ्र खीस पिला देनी चाहिए। कई पशु-पालकों का मत है कि जब तक पशु जेर न डाले तब तक नवजात बछड़े-बछड़ी को खीस नहीं पिलानी चाहिए। उनका यह मत सही नहीं है। इसलिए नवजात बछड़ी-बछड़े को शीघ्र खीस पिला देनी चाहिए जिससे कि अधिक उत्पादक बन सके।

आजकल आम लोगों से शिकायत आ रही है कि उनके पशु बछड़ा बछड़ी मरने के पश्चात् दूध देना बन्द कर देते हैं। इससे छुटकारा पाने के लिए केवल एक ही हल है कि पशु के नवजात बछड़े बछड़ी को जन्म के तुरन्त पश्चात् हटा लें और उन्हें अलग से खीस पिलायें। ऐसा करने से एक तो पशु के दूध का सही-सही अनुमान लगाया जा सकेगा और दूसरा नवजात बछड़ा-बछड़ी को भी पूरी मात्रा में दूध मिल पाएगा। ऐसा करने से पशु के बछड़ा बछड़ी मर जाने के पश्चात् गाय दूध देती रहेगी जिससे पशु पालकों की उपरोक्त समस्या भी हल हो जाएगी।

पशु के बच्चे को कृमिरहित करना आवश्यक है। ऐसा न करने से बछड़ा बीमार हो जाएगा और अधिक अच्छा उत्पादक न बन पाएगा। पशु पालकों को चाहिए कि पशु चिकित्सक के पास अपने पशु के बच्चों को 6 मास तक की आयु तक महीने में दो बार दिखाकर कृमिरहित करवायें।

पशुपालक का आवास

पशु पालकों को चाहिए कि अपना आवास पशुशाला के पास बनाएं जिससे समय-समय पशुओं का निरीक्षण किया जा सके। पशुपालकों को चाहिए कि अपने फार्म पर ही पशु के लिए चारा उगाएं जिससे पशुओं को अच्छी किस्म का चारा मिल सके। बाजार में बिकने वाले चारे में पानी, मिट्टी, धूल जमी होती है जिससे पशु को अफारा होने का भय रहता है।

पशुपालकों को चाहिए कि वे उपरोक्त विधियों को अपनाएं और एक सफल डेरी फार्मिंग में हाथ बटाएं। ✱

Regd. No. D(D) 98

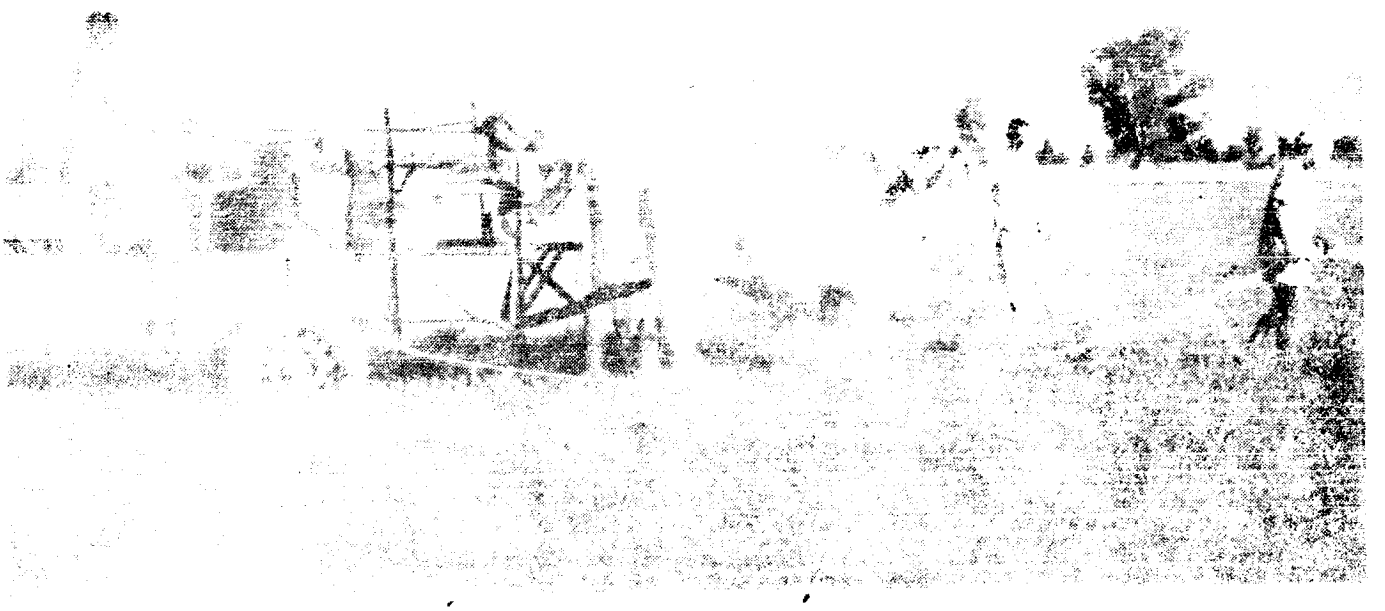

गेहूं के खेत में कीटनाशकों का छिड़काव करते हुए।

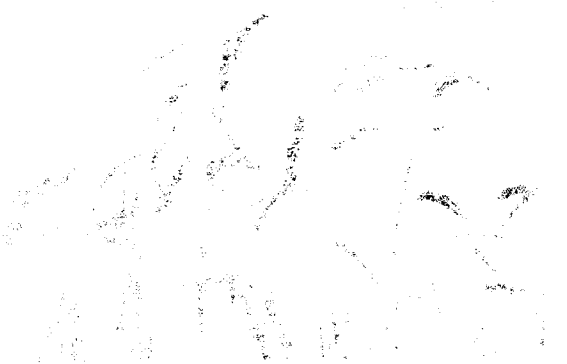

गेहूं की एक नई किस्म जो सूखा वाले क्षेत्रों में काफी मात्रा में लोकप्रिय है और जिसमें प्रोटीन काफी मात्रा में पाई जाती है।

भूसे की बुर्जी

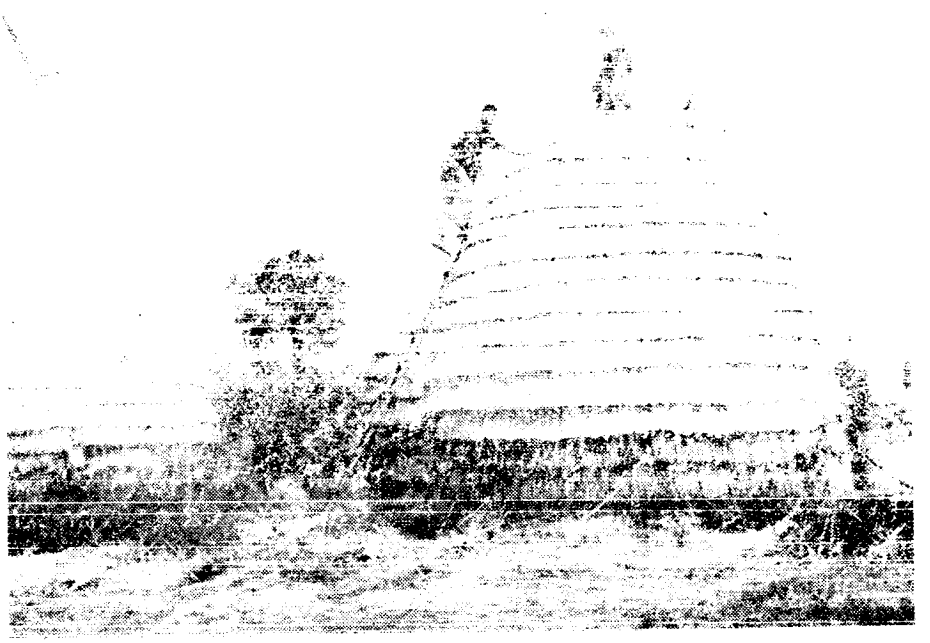

चित्र : भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के सौजन्य से

निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और
प्रबंधक भारत सरकार मुद्रणालय फरीदाबाद द्वारा मुद्रित